ओ३म्

आर्य जगत्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

रविवार, 12 जुलाई 2026

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक पत्र

सप्ताह रविवार, 12 जुलाई 2026 से 18 जुलाई 2026

आषाढ़ कृ. 13 ● वि० सं०–2082 ● वर्ष 67, अंक 28, प्रत्येक मंगलवार को प्रकाश्य, दयानन्दाब्द 202 ● सृष्टि-संवत् 1,96,08,53,126 ● पृ.सं. 1-12 ● मूल्य - 5/- रु. ● वार्षिक शु. 300/- रु.

डी.ए.वी. वेलचेरी, चेन्नई में अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, वेलचेरी, चेन्नई में 20 जून 2026 को 12वाँ अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस बड़े उत्साह एवं उमंग के साथ मनाया गया। इस वर्ष का विषय "स्वस्थ आयु के लिए योग" था, जिसने सभी आयु वर्ग के लोगों के शारीरिक, मानसिक एवं भावनात्मक स्वास्थ्य को सुदृढ़ बनाने में योग के महत्त्व को प्रतिपादित किया।

कार्यक्रम का शुभारंभ तमिलनाडु के राज्य गीत तथा दीप प्रज्ज्वलन कर किया गया।

मुख्य अतिथि डॉ. डी. धनंजयन का परिचय कराया गया, जो मास्टर डीजे योगा के संस्थापक, योगरत्न, चिकित्सोपचार विशेषज्ञ तथा अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रमाणित योग गुरु हैं।

मुख्य अतिथि ने नियमित योगाभ्यास के माध्यम से शारीरिक स्वास्थ्य, मानसिक संतुलन तथा आंतरिक शांति बनाए रखने के महत्त्व पर प्रकाश डाला। प्रधानाचार्या ने विद्यार्थियों को स्वस्थ एवं संतुलित जीवनशैली के लिए योग को अपने दैनिक जीवन का अभिन्न अंग बनाने हेतु प्रेरित किया।

अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस समारोह के अतिरिक्त सेवा समाजम, पल्लीपट्टू, आई.आई.टी. परिसर में 60 विद्यार्थियों की सहभागिता के साथ योगसत्र आयोजित किया गया। बेथेल एवेन्यू एवं वी.जी.पी. सेल्वा नगर के निवासियों के लिए बास्केटबॉल कोर्ट में योग प्रदर्शन आयोजित किया गया। विद्यार्थियों तथा समाज के विभिन्न वर्गों को योग को जीवनशैली के रूप में अपनाकर समग्र स्वास्थ्य एवं कल्याण की दिशा में आगे बढ़ने के लिए प्रेरित किया गया।

डी.ए.वी. पुष्पांजलि में ग्रीष्मावकाश से लौटे छात्रों ने किया यज्ञ

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल पुष्पांजलि के प्रांगण में 1 जुलाई को शुभकामना यज्ञ का आयोजन किया गया। दिव्य वेदमन्त्रों के साथ विद्यालय परिवेश की शुद्धता, पवित्रता, प्रगति की प्रार्थना की गई।

प्रधानाचार्या ने डी.ए.वी. की महान परंपरा का वर्णन करते हुए कहा कि हमारी परंपरा में प्रार्थना का सर्वश्रेष्ठ रूप यज्ञ ही है।

शिक्षा की प्रविधि में हुए परिवर्तनों की चर्चा करते हुए, प्रधानाचार्या ने कहा सी.बी.एस.ई. के उद्देश्य की पूर्ति के लिए हम भी पढ़ाई के साथ–साथ विद्यालय में विभिन्न खेलों को क्रमिक रूप से आयोजित कर रहे हैं। आप सभी खेलों में अपना, विद्यालय का नाम ख्यात करें। उन्होंने AI की चर्चा करते हुए कहा हमें इस प्लेटफार्म का भी सार्थक उपभोग करना सीखना चाहिए।

प्रधानाचार्या ने विद्यालय की प्रगति में बहुत निष्ठा और समर्पण का आह्वान किया। उन्होंने कहा अनुशासन व्यवस्था की वह बैशाखी है, जिससे जीवन महत्वपूर्ण बनाया जा सकता है। इसके लिए आपको सतत कोशिश करते हुए सकारात्मक बने रहना चाहिए। ग्रीष्मावकाश के बाद मैं पुनः विद्यालय आगमन पर आपका स्वागत करती हूँ और हार्दिक शुभकामनाएँ देती हूँ।

डी.ए.वी. ऐरोली, नवी मुंबई में स्वस्थ आयु के लिए योग

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, ऐरोली, नवी मुंबई में अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस का आयोजन किया गया। वर्ष 2026 की थीम 'स्वस्थ आयु के लिए योग' के अनुरूप आयोजित इस कार्यक्रम में विद्यालय के 3469 छात्रों, 145 शिक्षकों, प्रशासनिक एवं सहायक कर्मचारी सदस्यों और 76 उत्साहित अभिभावकों ने सक्रिय सहभागिता निभाई।

कार्यक्रम का शुभारंभ पवित्र मंत्रोच्चारण के साथ हुआ।

विद्यार्थियों एवं शिक्षकों ने उत्साहपूर्वक 'शिथिलज' क्रियाओं (चलन क्रियाएँ) का अभ्यास किया। इसके पश्चात् ताड़ासन, अर्धचक्रासन, त्रिकोणासन, पादहस्तासन तथा वीरभद्रासन जैसे विभिन्न योगासनों का अभ्यास किया गया।

कार्यक्रम में विशेष आकर्षण कक्षा आठवीं के विद्यार्थियों द्वारा प्रस्तुत योग प्रदर्शन रहा।

प्राचार्या श्रीमती सुमन प्रधान ने विद्यार्थियों को सुपर ब्रेन योग को अपनी दिनचर्या का अभिन्न अंग बनाने के लिए प्रेरित किया, जिससे मानसिक सजगता, एकाग्रता एवं ऊर्जा के स्तर में वृद्धि हो सके।

शिक्षकों ने भी विद्यार्थियों के साथ उत्साहपूर्वक योगाभ्यास में भाग लिया।

सभी प्रतिभागियों ने नियमित योगाभ्यास करने तथा स्वस्थ, संतुलित एवं सजग जीवनशैली अपनाने का संकल्प लिया।

जो जीवों को देने योग पदार्थों का दाता और ग्रहण करने योग्यों का ग्राहक है, इससे उस ईश्वर का नाम **'होता'** है। स. प्र. समु. १

{संपादक – पूनम सूरी}

ओ३म्
आर्य जगत्
सप्ताह रविवार, 12 जुलाई 2026 से 18 जुलाई 2026

ब्रह्म-कवच से रक्षित

● डॉ. रामनाथ वेदालंकार

परीवृतो ब्रह्मणा वर्मणाहं, कश्यपस्य ज्योतिषा वर्चसा च।
मा मा प्रापन्निषवो दैव्या याः, मा मानुषीरवसृष्टा वधाय।।
अथर्व17.1.28

ऋषिः **ब्रह्मा।** देवता **आदित्यः।** छन्दः **त्रिष्टुप्।**

● (**अहं**) मैं (**ब्रह्मणा**) ब्रह्म–रूप (**वर्मणा**) कवच से [तथा] (**कश्यपस्य**) द्रष्टा आत्मा की (**ज्योतिषा**) ज्योति से (**वर्चसा च**) और वर्चस्विता से (**परीवृतः**) आच्छादित [होऊँ]।(**याः**) जो (**दैव्याः**) दैवी (**इषवः**) बाण हैं, वे (**मा**) मुझे (**मा**) मत (**प्रापन्**) प्राप्त हों, (**मा**) न ही (**बधाय**) वध के लिए (**अवसृष्टाः**) छोड़े हुए (**मानुषी**) [इषवः] मानुषी बाण [प्राप्त हों]।

●संसार में रहते हुए मुझे अनेक दैवी और मानुषी विपत्तियों से संघर्ष करना है। देखो, कैसे–कैसे दैवी बाणों का मुझपर प्रहार हो रहा है। कभी भूकम्प आ रहे हैं, कभी सर्वनाशिनी आँधियाँ चल रही हैं, कभी असमय ओले वरस रहे हैं, कभी ज्वालामुखी फूट रहे हैं, कभी अतिवृष्टियाँ और अनावृष्टियाँ हो रही हैं, कभी दुर्भिक्ष पड़ रहे हैं, कभी नदियों में विनाशलीला मचा देनेवाली बाढ़े आ रही हैं, कभी उल्कापातों की झड़ी लग रही है कभी भूमि फट रही है, कभी ऋतुओं में अव्यवस्था हो रही है, कभी महामारियाँ फैल रही हैं। इन सब दैवी बाणों के प्रहार मुझ मानव को क्षणभर में नष्ट–भ्रष्ट कर सकते हैं। दूसरी और मानुषी बाणों पर,मनुष्य द्वारा उत्पन्न की गई विपत्तियों पर भी दृष्टिपात करो। तलवारें खनखना रही हैं, तोपें गोले बरसा रही हैं, बन्दूको की गोलियाँ सिर पर से निकट रही है, संधातक विस्फोट किये जा रहे हैं। ऐटम–बम छोड़े जा रहे हैं, विषैली गैसें फैलाई जा रही हैं, नये–से–नये संहारक आविष्कार किये जा रहे हैं। इन सब मानुषी बाणों से भी मैं विपद्ग्रस्त तथा जर्जर हो गया हूँ, और मानव–जाति संहार के कगार पर खड़ी प्रतीत हो रही है।

इस प्रकार के दैवी और मानवी बाणों के प्रहार से बचने का एक उपाय यह है कि मैं ब्रह्म का कवच धारण कर लूँ। ब्रह्म का कवच पहनते ही हृदय में धैर्य , आश्वासन और बड़े का सहारा प्राप्त कर लेने का सन्तोष जागृत होगा और जैसे सेनापति के साथ होने पर सैनिकों में उत्साह की लहरें हिलोरें मारती रहती हैं वैसे ही मेरे अन्दर संकटो से जूझने का उत्साह बना रहेगा। इन बाणों से आत्मा–रक्षा का दूसरा उपाय यह है कि मैं द्रष्टा आत्मा (कश्यप) की ज्योति और वर्चस्विता से अनुप्राणित हो जाऊँ। मेरे आत्मा में जो शक्ति निहित है, उसे पहचानूँ। आत्मा में जो अमरता की ज्योति जग रही है उसके दर्शन करुँ तथा इस भावना को अपने अन्दर जगाऊँ कि आत्मा अमर है, अतः संघर्षों से घबराना क्या! इस प्रकार ब्रह्म–कवच और कश्यप आत्मा की ज्योति से आच्छादित होकर मैं समस्त दैवी और मानुषी वाणों से आत्म–रक्षा में समर्थ हो सकता हूँ।

❑

वेद मंजरी से

इस अंक में प्रकाशित सभी लेखों में व्यक्त भावों व विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं और इसमें किसी आपत्तिजनक बात के लिए 'सम्पादक' एवं 'आर्य जगत्' उत्तरदायी नहीं होगा।

एक ही रास्ता

● **महात्मा आनन्द स्वामी सरस्वती**

'एक ही रास्ता' पुस्तक में स्वामी जी के आर्य समाज करोल बाग में दिए गए प्रवचन सग्रहित हैं जिसमें स्वामी जी कहते हैं–वेद धन, दौलत, बीबी, बच्चों की प्राप्ति का विरोधी नहीं है वरन् वेद कहता है वे सभी वस्तुएँ, सुख सुविधाएँ अर्जित करो जो धर्म के आधार पर अर्जित की गई हों परन्तु इन सब को मर्यादा में रहकर, नियमानुसार, पाप रहित होकर ग्रहण करो। धन दौलत, बीबी, बच्चे, भक्ति आदि को संयमित व मर्यादित होकर अर्जित करो। **अति सर्वत्र वर्जयेत्।**

स्वामी जी सत्य और ऋत् का अन्तर विभिन्न उदाहरण देकर स्पष्ट कर रहे हैं। 'ओ३म्' तथा गायत्री मन्त्र के महत्व को समझा रहे हैं। गायत्री मन्त्र आकार में छोटा होकर भी महामन्त्र क्यों कहलाया ? क्योंकि उसमें बुद्धि की याचना की गई है। यदि बुद्धि ने मेधा (बुद्धि की सर्वोच्च स्थिति) का रूप ले लिया है तो मानव जीवन की सफलता को कोई शक्ति रोक नहीं सकती।

परन्तु इस सबको करते हुए धैर्य की अत्यन्त आवश्यकता है। हर कार्य को धैर्य व धर्म के साथ करते रहो। हलवाई की चाशनी सम्बन्धी उदाहरण देकर स्वामी जी ने कर्म व उसके सही समय पर फल प्राप्ति का अनूठा सामंजस्य प्रस्तुत किया है। हलवाई चीनी के मैल को निकालने के लिए चाशनी को पकाता जाता है, दूध डालता जाता है....।

... अब आगे

यही दशा तो हमारे मन की भी है। मन नहीं लगता, उचटता है, भागता है, तो घबराओ नहीं। उफान उठेगा अवश्य। जब–जब उफान उठे, तब–तब ओ३म् के जाप का दूध डालते जाओ। मैल को काटते जाओ। धीरे–धीरे वह समय आयेगा जब मैल नहीं रहेगी, जब यह मन शुद्ध और निर्मल हो जायेगा। मैल से घबराओ नहीं। जन्म–जन्म की मैल है यह। इसे बाहर निकालना है। एक दिन में यह निकलती नहीं, परन्तु अन्ततः निकलती अवश्य है और अन्त में शुद्ध और पवित्र चाशनी तैयार हो जाती है और जो लोग कहते हैं कि हमें ईश्वर पर विश्वास है नहीं, उन्हें कैसे समझाऊँ?

बादशाह अकबर की बात सुनाता हूँ। बीरबल का नाम तो आप जानते हैं। बहुत विद्वान् ब्राह्मण थे वे। अकबर के साथ रहते थे। स्वयं ईश्वर को याद करते थे, कई बार बादशाह को भी कहते थे–"ईश्वर को याद करो।" एक दिन बादशाह ने कहा–"अच्छा बीरबल, तुम जो कहते हो ईश्वर को याद करुँ तो बताओ कि ईश्वर कहाँ रहता है? कैसे उसके दर्शन हो सकते हैं और वह क्या करता है?" एक साथ तीन प्रश्न पूछ लिए उसने। तीनों बहुत कठिन। बीरबल चिन्ता में डूब गया, बोला, "सात दिन का अवकाश दो, आपके सवालों का उत्तर सातवें दिन दूँगा।" परन्तु उत्तर देना कहाँ सरल है! छः दिन बीत गए। बीरबल को उत्तर नहीं सूझा। सातवें दिन चिन्ता में डूबा बैठा था वह, तभी उसके नन्हें बेटे ने आकर कहा, "पिताजी, आप चिन्ता में क्यों हैं?" बीरबल ने कहा, "बादशाह ने तीन प्रश्न पूछे हैं, उनका उत्तर नहीं मिलता।" प्रश्न भी बता दिये उसको। नन्हा सा बालक बोला, "वाह ! इतनी–सी बात की चिन्ता है आपको ? इनके उत्तर तो मैं बता सकता हूँ।" बीरबल ने कहा, "बताओ।" बेटे ने कहा, "आपको नहीं, बादशाह को बताऊँगा, मुझे उसके पास ले चलो।" बीरबल बेटे को लेकर बादशाह के पास पहुँचा; बोला– "श्रीमन्, आपके सवालों का उत्तर यह नन्हा बालक देगा।" बादशाह ने आश्चर्य से बालक की ओर देखा; बोले, "इतने कठिन प्रश्न, उत्तर देगा यह बालक! फिर बोले, "अच्छा बच्चे, बताओ हमारे प्रश्नों का क्या उत्तर है ?" बच्चे ने कहा, "बादशाह! तुम भारत में नये–नये आए हो, भारत की संस्कृति को जानते नहीं। भारत की संस्कृति यह है कि कोई आदमी मिलने के लिए आए तो पहले उसे खिला–पिलाकर उसका सत्कार करो, बाद में उससे बातें करो। यह एकदम–से उत्तर पूछने का रिवाज

शेष पृष्ठ 09 पर ☞

वेद, गुरुकुल और आर्यसमाज

● रामचन्द्र आर्य

मनुष्य प्रगतिशील प्राणी है। सर्वप्रथम मनुष्य की आकांक्षा खिलौने तक ही सीमित होती है। जैसे–जैसे इसका उत्कर्ष होता जाता है वैसे–वैसे इसकी आकांक्षा भी उत्कृष्ट खिलौनों से खेलने की होती जाती है। यहाँ तक कि अन्ततः यह मुमुक्षु हो जाता है, मोक्षकामी हो जाता है। सबसे बड़े खिलौने ईश्वर से खेलने की इच्छा करता है। मुण्डकोपनिषद् के अनुसार "आत्मक्रीड, आत्मरति इसका लक्ष्य रहता है। यही वास्तव में पूर्ण अभ्युदय है। उसी को अभ्युदय कहा जा सकता है जिससे अगला कदम सीधे निःश्रेयस में पड़े।"

वेद प्रारम्भिक स्थिति से लेकर अन्तिम स्थिति तक मनुष्य का सटीक मार्गदर्शन करता है। वेद ईश्वर की वाणी है। सर्वप्रथम बालक जब आँख खोलता है तो संसार को देखकर आश्चर्यचकित हो जाता है। उसे मार्गदर्शन की आवश्यकता होती है। आज तो माता, पिता, आचार्य आदि यह कार्य करते हैं। सृष्टि की आदिम स्थिति में यह काम ईश्वर करता है। वह आदिम मनुष्य की आत्मा में ज्ञान का प्रकाश करता है। ईश्वर निर्भ्रान्त है और सर्वज्ञानमय भी है। उसका दिया यह ज्ञान भी इसी कोटि का होता है। ज्ञान के समान तो कोई भी मनुष्य का मित्र इस लोक में नहीं है। सृष्टि के इस आदिम ज्ञान का नाम वेद है। संसार में जितना ज्ञान विज्ञान दिखाई पड़ता है, वह सारा इसी वेद से ही परम्परा द्वारा चलता हुआ आया है। वेद शब्द के धात्वर्थ के योग से चार प्रमुख अर्थ हैं–**ज्ञान, विचार, सत्ता और लाभ।** वेदों में ये चारों अर्थ पूर्णतया घटते हैं। ऋक्प्रातिशाख्य के कर्त्ता विष्णुमित्र कहते हैं–

"विद्यते ज्ञायते लभ्यते वा एभिः धर्मादिपुरुषार्थ इति वेदाः"

इन वेदों से मानव जीवन को धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष चारों फलों की उपलब्धि होती है।

ईश्वर सबसे बड़ा कलाकार है। पृथ्वी, सूर्य, चन्द्र, पृथ्वीस्थ नदी, पर्वत, वृक्ष, पशु, पक्षी, कीट, पतंग तथा मनुष्य सभी उसकी कला के दृष्टान्त हैं। मनुष्य वेद से ज्ञान प्राप्त करके तदनुसार इन सब कलाओं का निरीक्षण, परीक्षण, विश्लेषण करके सबसे बड़े कलाकार का दर्शन करता है।

ईश्वर का ज्ञान, वेद संस्कृत भाषा में है। महर्षि दयानन्द एक प्रश्न उठाते हैं–क्या संस्कृत में वेदों का प्रकाश करके और अन्य भाषाओं में वेद का प्रकाश न करके ईश्वर पक्षपाती नहीं ठहरता ?

इस प्रश्न का उत्तर भी स्वयं देते हैं ! नहीं, यह सब भाषाओं का मूल है। इस दृष्टि से संस्कृत एक सम्पूर्ण भाषा है। यह सबसे सरल भाषा है, जो भाषा संस्कृत से जितनी दूर होती जाती है, उसकी सरलता घटती जाती है। शब्द निश्चित अर्थ का रूप धारण करते जाते हैं। एक बार यौगिक शब्द किसी अर्थ पर रूढ़ हुआ कि उसका विस्तार रुका। यही कारण है कि अंग्रेज़ी जैसी विश्वभाषा कही जाने वाली भाषा में सूर्य–Sun, चाँद–Moon, भाई–Brother, बहन–Sister आदि इतने महत्त्वपूर्ण वस्तुओं के लिए मात्र एक–एक नाम है। अनेक मानवीय सम्बन्धों के लिए तो शब्द ही नहीं हैं।

इधर संस्कृत में एक–एक पदार्थ के लिए अनेक नाम उपलब्ध होते हैं। पानी के सौ नाम, सूर्य के 50–60 नाम। मज़ेदार बात यह है कि इनमें से कोई दो नाम भी पर्यायवाची नहीं। जल के सौ नाम जल की सौ विशेषताएँ बतायेंगे। ऐसे ही सभी नामों की स्थिति है। यदि आप किसी वस्तु के पूरे नामों को अर्थ सहित जानते हैं तो आप उस विषय के पण्डित हैं। आप की पहुँच उसके मर्म तक है। संसार की किसी भाषा की यह स्थिति नहीं है। संस्कृत का गौरव मात्र इस बात में नहीं है कि इसमें प्रत्येक धार्मिक, आध्यात्मिक, सामाजिक, राजनैतिक, तकनीकी, विमानन, विज्ञान का प्रत्येक प्रवाह (stream) यथा भौतिकी, रसायन, जीव विज्ञान, आयुर्वेद आदि का प्रत्येक प्रकार का साहित्य उपलब्ध है। किन्तु जिन मनीषियों ने इन विषयों में साधना की, बहुत दूर तक उनका भी गौरव इसमें निहित है। भाषा का अपना सामर्थ्य है, जो मनीषी की बहुत अधिक सहायता करता है।

आप कह सकते हैं कि इन सबका तो अनुवाद तत्तद् भाषा में करके उन भाषाओं को भी समृद्ध बनाया जा सकता है। सच है, किन्तु जैसा कि हम पूर्व में ही बता चुके हैं कि संस्कृत भाषा विज्ञान ही है क्योंकि यदि आप किसी पदार्थ के सभी नामों को अर्थ सहित जानते हैं तो आप उस पदार्थ का तलस्पर्शी ज्ञान रखते हैं। यह विशेषता और कहाँ से लाइयेगा। अब रही अनुवाद की बात तो अन्य विषयों का अनुवाद तो आप भी कर लेंगे, पर वेद का अनुवाद कैसे कीजियेगा।

वेदों का पठन–पाठन अवरुद्ध होने से अनेक अन्धविश्वास, रूढ़ियाँ, कुरीतियाँ उठ खड़ी हुईं। मानव को विपथगामी करने वाली इन रूढ़ियों, कुरीतियों का उन्मूलन महर्षि दयानन्द जी वेद के अगाध पाण्डित्य, प्रबल तर्कणा, विमल प्रज्ञा तथा ब्रह्मचर्य के बल पर कर पाए थे। आज भी गोहत्या, सतीप्रथा, नारी उत्पीड़न आदि अनगिनत दोष वेदों के गले मढ़े जा रहे हैं। किसी को काबा, किसी को कबीर के दर्शन वेदों में हो रहे हैं। इस प्रकार की अनर्गल, आधारहीन बातों का खण्डन एवं सत्य–धर्म, सत्य–ज्ञान, सत्य–विज्ञान का प्रकाश केवल वेदों के गम्भीर अध्ययन–अध्यापन से होना संभव है।

वेद में कुछ शब्द हैं जिन्हें व्याहृति और महाव्याहृति कहा जाता है। व्याहृति का अर्थ होता है–एक शब्द, जिसमें महान् ज्ञान विज्ञान समाहित है। वेदों के विषय में जितना हम जान पाए हैं उसके अनुसार सम्पूर्ण वेद ही महाव्याहृति हैं। आज तक कोई भी ऋषि दावा नहीं कर पाया और न भविष्य में ही कर पाएगा कि अमुक मन्त्र का पूरा रहस्य हमारे समक्ष आ ही गया है। इसलिए वेद की रक्षा होनी चाहिये। वेद के अध्येता, व्याख्याता संसार में रहने ही चाहियें। मात्र संस्कृत का पण्डित बनकर भी कोई वेद–व्याख्याता व भाष्यकार नहीं बन सकता। महर्षि दयानन्द और सभी ऋषिगण निर्विवाद रूप से इस सत्य को स्वीकार करते हैं कि शिक्षा, व्याकरण, निरुक्त, कल्प, छन्द और ज्योतिष छः वेदांग, न्याय, वैशेषिक आदि छः उपांग और ब्राह्मण ग्रन्थों की विशद जानकारी, योगाभ्यास, सूक्ष्मप्रज्ञा तथा ईश्वर की विशेष कृपा के बिना कोई व्यक्ति वेदों का भाष्य नहीं कर सकता। इतने गहन गम्भीर ज्ञान के लिए सुयोग्य आचार्य, गुरुकुल और योग्यतम बटुकों की आवश्यकता होगी।

संसार के शेष आर्यों (मानव मात्र) की दृष्टि तो वेद पर है ही नहीं। एक आर्यसमाज है सो भी गुरुकुलों के प्रति पूर्णतः उदासीन है। कुछ लोग हैं जो वेद की महिमा को जान कर पूरी निष्ठा के साथ गुरुकुल के संचालन का व्रत लेते हैं पर साधन जुटाते–जुटाते वृद्ध हो जाते हैं। जब तक गुरुकुल आरम्भ हो तब तक उनकी सामर्थ्य बहुत कम रह गई होती है। इधर आर्यसमाज–**तं जातं दृष्ट्वा** – हमारे समाज में पधारिये, एक सप्ताह का समय हमें दीजिये, आप पर तो हमारा विशेष अधिकार है, आदि कहकर उन्हें गुरुकुल के सतत संचालन से दूर कर देते हैं। पहले तो सहयोग मिलता नहीं, मिलता भी है तो गुरुकुल से आचार्य को छीन लिया जाता है। बेचारा आचार्य भी बाध्य है, धन के बिना गुरुकुल कैसे चलाए, यह आत्महत्या है। आर्यो! उपदेश सुनना है तो गुरुकुल में आइये। गुरुकुल का सहयोग घर बैठे कर्त्तव्य समझ कर कीजिए।

गुरुकुल यदि सम्पन्न होंगे, अनाथालय नहीं होंगे तो निकम्मे और बिगड़े हुए बच्चों की शरणस्थली नहीं बनेंगे। योग्य से योग्य माता–पिता के प्रतिभाशाली पुत्र–पुत्रियाँ गुरुकुलों में पढ़ेंगे, तो इनमें से योग्यतम प्रशासक, वैज्ञानिक, राजनेता, सेनाधिकारी, दयानन्द जैसे क्रान्तिकारी – सब कुछ तो मिलेगा। एक कुटिया में बैठे विरजानन्द के गुरुकुल से संसार को दयानन्द के दर्शन हुए, बाबा अमरलाल जोशी द्वारा अकिञ्चन दयानन्द को भोजन के लिये निश्चिन्त करने से संसार का कितना उपकार हुआ, इसका हिसाब तो सदियों के इतिहासकार लगायेंगे। आपको और दयानन्द नहीं चाहियें क्या?

गुरुकुल आर्य कन्या विद्यापीठ
नजीबाबाद (उ.प्र.)

ईश्वर सबसे बड़ा कलाकार है। पृथ्वी, सूर्य, चन्द्र, पृथ्वीस्थ नदी, पर्वत, वृक्ष, पशु, पक्षी, कीट, पतंग तथा मनुष्य सभी उसकी कला के दृष्टान्त हैं। मनुष्य वेद से ज्ञान प्राप्त करके तदनुसार इन सब कलाओं का निरीक्षण, परीक्षण, विश्लेषण करके सबसे बड़े कलाकार का दर्शन करता है।

ईश्वर का ज्ञान, वेद संस्कृत भाषा में है। महर्षि दयानन्द एक प्रश्न उठाते हैं-क्या संस्कृत में वेदों का प्रकाश करके और अन्य भाषाओं में वेद का प्रकाश न करके ईश्वर पक्षपाती नहीं ठहरता ?

इस प्रश्न का उत्तर भी स्वयं देते हैं ! नहीं, यह सब भाषाओं का मूल है। इस दृष्टि से संस्कृत एक सम्पूर्ण भाषा है। यह सबसे सरल भाषा है, जो भाषा संस्कृत से जितनी दूर होती जाती है,

गतांक से आगे...

श्री पं. युधिष्ठिर मीमांसक

● डॉ. ज्वलन्त कुमार शास्त्री

श्रद्धेय पं. ब्रह्मदत्त जिज्ञासु जी की परम्परा के प्रातः स्मरणीय विद्वान् श्री पं. युधिष्ठिर मीमांसक के जीवन और कार्यों पर यह शोधपूर्ण लेख डॉ. ज्वलन्त शास्त्री जी की सशक्त और खोज़ी लेखनी का अद्यतन विद्वानों और शोध छात्रों के लिए एक उपहार है। पाठक इस किंचित् लम्बे लेख से लाभान्वित हों, इस प्रयोजन से इसे धारावाहिक रूप में प्रकाशित कर रहे हैं। यह लेख की पाँचवीं किश्त है। -सम्पादक

29. काशकृत्स्न–व्याकरणम्–काशकृत्स्न–व्याकरण का परिचय, तथा उपलब्ध 135 सूत्रों की संस्कृत में व्याख्या–1965 ई., द्वि.सं.–1995 ई.। पुस्तक रूप में आने से पूर्व साहित्य पत्रिका (पटना) में शोध निबन्ध के रूप में प्रकाशित–1960–61 ई.।

30. उणादि–कोष–स्वामी दयानन्द सरस्वती विरचित पंचपादी उणादिपाठ की उणादिकोष नाम्नी व्याख्या का सम्पादन। विविध टिप्पणियों–सूचियों से युक्त प्रथम संस्करण–1974 ई., तृतीय संस्करण–2000 ई.।

31. कात्यायन–गृह्यसूत्र–अनेक हस्तलेखों की सहायता से सम्पादन–1983 ई.।

32. धातुप्रदीप–पाणिनीय धातुपाठ की मैत्रेयरक्षित विरचित वृत्ति–1986 ई.।

33. श्रौतयज्ञ–मीमांसा–(संस्कृत–हिन्दी) इसमें अग्निहोत्र से लेकर अश्वमेधान्त श्रौतयज्ञों के उद्भव, विकास तथा उनमें परिवर्तन, श्रौतयज्ञों का मूल प्रयोजन और पशुयागों के सम्बन्ध में विस्तार से मीमांसा की है–1987 ई., द्वितीय संस्करण–2004 ई.।

34. वैदिक छन्दोमीमांसा–इसमें वैदिक वाङ्मय से सम्बन्ध रखने वाले 5–6 उपलब्ध छन्दःशास्त्रों के अनुसार सभी छन्दों के भेद–प्रभेदों के लक्षण और उदाहरण दर्शाये हैं। साथ में छन्दोज्ञान की वेदार्थ में उपयोगिता, छन्दः परिवर्तन के कारण, और छन्दः शास्त्र का संक्षिप्त इतिहास आदि अनेक विषयों का समावेश किया है–1960 ई., द्वितीय संशोधित परिवर्धित संस्करण–1979 ई.।

35. वैदिक–स्वर–मीमांसा–इसमें वैदिक ग्रन्थों में प्रयुक्त उदात्त अनुदात्त स्वरित आदि स्वरों का वाक्यार्थ के साथ क्या सम्बन्ध है, स्वर–परिवर्तन से अर्थ में किस प्रकार परिवर्तन होता है, स्वर–शास्त्र की उपेक्षा से वेदार्थ में कैसी भयंकर भूले होती हैं, इत्यादि अनेक विषयों का सोपपत्तिक सोदाहरण प्रतिपादन किया है। अन्त में उदात्तादि स्वरों के विभिन्न प्रकार के संकेतों स्वरचिह्नों की सोदाहरण व्याख्या की है। परिशिष्ट में मन्त्र–संहिता से पदपाठ में परिवर्तन के नियमों की सोदाहरण विवेचना की है–1958 ई.। परिवर्धित द्वितीय संस्करण में पाणिनीय व्याकरण के अनुसार स्वर विषय का संक्षेप से ज्ञान कराने के लिए स्वामी दयानन्द सरस्वती कृत 'सौवर' ग्रन्थ भी अन्त में जोड़ दिया है–1963 ई., पुनः संस्कृत और परिवर्धित तृतीय संस्करण–1985 ई.।

36. संस्कृत–व्याकरण–शास्त्र का इतिहास (भाग–1)–इस ग्रन्थ में पाणिनि से प्राचीन तेईस वैयाकरणों का इतिवृत्त, उसमें अनेक आचार्यों के उपलब्ध सूत्रों का संकलन, पाणिनि और उसके व्याकरण पर टीका–टिप्पणी लिखने वाले लगभग 160 आचार्यों, तथा पाणिनि से उत्तरवर्ती 18 प्रमुख व्याकरण–प्रवक्ताओं, और उनके लगभग 100 व्याख्याताओं का इतिहास लिखा गया है। न केवल राष्ट्रभाषा हिन्दी में, अपितु संसार की किसी भी भाषा में संस्कृत व्याकरणशास्त्र के इतिहास पर इतना विस्तृत ग्रन्थ प्रकाशित नहीं हुआ। प्रथम संस्करण– 1951 ई., द्वितीय परिवर्धित संस्करण–1963 ई., तृतीय परिवर्धित संस्करण–1973 ई., चतुर्थ परिवर्धित संस्करण–1984 ई.।

37. संस्कृत व्याकरण–शास्त्र का इतिहास (भाग–2)–इसमें व्याकरणशास्त्र के परिशिष्टरूप धातुपाठ, उणादिसूत्र, लिंगानुशासन, परिभाषापाठ और फिट्सूत्रों के प्रवक्ताओं और व्याख्याताओं का इतिवृत्त लिखा गया है। अन्त में प्रातिशाख्यों के प्रवक्ता और व्याख्याता, व्याकरण शास्त्र के दार्शनिक ग्रन्थकार तथा व्याकरण प्रधान लक्ष्यात्मक काव्यग्रन्थों के रचयिताओं का इतिहास भी दिया है। प्रथम संस्करण–1962 ई., द्वितीय परिवर्धित संस्करण–1973 ई., तृतीय परिवर्धित संस्करण–1984 ई.।

38. संस्कृत व्याकरण–शास्त्र का इतिहास (भाग–3)–इसमें अवशिष्ट विषय, अनेक परिशिष्ट तथा सूचियाँ आदि दी गई हैं। प्रथम संस्करण–1973 ई., परिवर्धित संस्करण– 1985 ई.।

मीमांसक जी के लेखन के विषय का एक महत्त्वपूर्ण पक्ष यह भी है कि उन्होंने ऋषि दयानन्द के जीवन चरित, पत्र–विज्ञापन सहित सभी ग्रन्थों का ऐतिहासिक तथा शास्त्रीय परिप्रेक्ष्य में गम्भीर अध्ययन व सम्पादन कर प्रामाणिक संस्करण प्रस्तुत किया है–

39. ऋग्वेद भाष्य (संस्कृत–हिन्दी)

स्वामी दयानन्द विरचित **'ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका'** सहित प्रति भाग सहस्राधिक टिप्पणियाँ, 10–11 प्रकार के परिशिष्ट व सूचियाँ। 1–3 भाग।

40. ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका

मीमांसक जी द्वारा सम्पादित ऋषि की कृति 'ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका' का यह विशिष्ट संस्करण है। (i) इसमें कतिपय पाठ हस्तलेख के अनुसार शुद्ध किये गये हैं। (ii) कतिपय पाठ–विपर्यासों को यथास्थान रख दिया गया है। (iii) आर्यभाषा में छुटे हुए पद–पदार्थ को संस्कृत भाषार्थ के आधार पर पूरे किया गया हैं। (iv) आर्यभाषा में जो पाठ संस्कृत भाषा के विपरीत अथवा असम्बद्ध था, वहाँ संशोधन किया गया तथा ऐसे विशिष्ट परिवर्तनों का निर्देश टिप्पणी में किया। इस प्रकार अन्य अनेक विशेषताओं से युक्त 'ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका' का यह संस्करण प्रथम बार 2024 वि.सं. में रामलाल कपूर ट्रस्ट से प्रकाशित किया गया।

41. ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका–परिशिष्ट

प्रथम–इसमें ऋषि दयानन्द की 'ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका' पर किये गये पण्डितों के आक्षेपों का ऋषि दयानन्द सरस्वती द्वारा दिए गए उत्तर, पत्र तथा ग्रन्थों का संग्रह है।

द्वितीय–ऋग्वेदभाष्य के नमूने के अंक पर जो आक्षेप पण्डितों ने किये थे, उनका स्वामी दयानन्द जी द्वारा दत्त उत्तर भी इसमें समाविष्ट है। प्रथम संस्करण– 1967 ई.।

42. सत्यार्थ–प्रकाशः (आर्यसमाज शताब्दी संस्करण–राजसंस्करण) शुद्धपाठयुतं विविधटिप्पणीभिरलंकृतं प्रामाणिकं संस्करणम्। द्वितीय संस्करण–1975 ई., पृष्ठ सं.–1272 (114+1158)। मीमांसक जी द्वारा सम्पादित इस 'सत्यार्थ–प्रकाश' की निम्नलिखित विशेषताएँ हैं–

(1) द्वितीय संस्करण के आधार पर मूल पाठ का संरक्षण।
(2) उद्धृत वचनों का शुद्ध पाठ तथा मूलस्थान का निर्देश।
(3) 3200 टिप्पणियों के साथ अत्युपयोगी विविध प्रकार के 13 परिशिष्ट।
(4) सत्यार्थ प्रकाश के प्रथम संस्करण (1875 ई.) के अत्युपयोगी कुछ विशिष्ट पाठों का परिशिष्ट में संकलन।
(5) विविध संस्करणों का विवेचनात्मक सम्पादकीय वक्तव्य।

43. संस्कारविधिः (आर्यसमाज शताब्दी संस्करण)

पृष्ठ–460 (49+411)। प्रथम संस्करण–1974 ई.। सहस्राधिक टिप्पणियाँ, 12 परिशिष्ट। संस्कारविधि के दो हस्तलेख हैं। प्रथम हस्तलेख को रफ कॉपी तथा द्वितीय हस्तलेख को प्रेस कॉपी कहते हैं। ऋषि दयानन्द ने प्रेस कॉपी का मात्र 47 पृष्ठ तक का ही संशोधन किया था, तभी उनका देहान्त हो गया। ऋषि के निधन के बाद उनके सहयोगी दो पण्डित–ज्वालादत्त शर्मा तथा भीमसेन शर्मा ने इन दोनों हस्तलेखों के आधार पर संस्कार विधि का द्वितीय संस्करण तैयार किया और प्रकाशित किया।

{(i) ऋषि दयानन्द के पत्र और विज्ञापन (द्वितीय संस्करण), मुन्शी समर्थदान के नाम लिखे पत्र–पृष्ठ–471, 481 (ii) संस्कारविधिः (स्वामी दयानन्द सरस्वती), द्वितीय संस्करण का मुखपृष्ठ – 'ज्वालादत्तभीमसेनशर्मभ्यां संशोधितः।'}

उसमें वेदादि शास्त्रों, गृहसूत्रों के प्रमाण तो थे किन्तु पते नहीं थे। मीमांसक जी ने अपने सहयोगी पण्डित आचार्य विजयपाल जी के सहयोग से सभी प्रमाणों के पते देकर तथा शुद्ध पाठ का सम्पादन इस संस्करण में किया है।

{संस्कारविधिः (नवम संस्करण) का सम्पादकीय–युधिष्ठिर मीमांसक 1997 ई.। प्रकाशक–रामलाल कपूर ट्रस्ट बहालगढ़, (सोनीपत–हरियाणा)}

44. वेदोक्त संस्कार प्रकाश

पं. बालाजी विट्ठल गांवस्कर द्वारा मूल मराठी में लिखे गये ग्रन्थ का हिन्दी अनुवाद। इसी का सम्पादन पं. युधिष्ठिर मीमांसक ने किया है। प्रथम संस्करण–1985 ई., पृष्ठ– 239। इस ग्रन्थ का गुजराती अनुवाद ऋषि दयानन्द के पुस्तक संग्रह में था। यह गुजराती अनुवाद ही संशोधित संस्कार विधि का आधार बना।

{वेदोक्त संस्कार प्रकाश–प्रकाशकीय–पृष्ठ–5–8 तथा पृष्ठ–15–25 तक}

अध्यापक आवास, स्टेशन रोड, अमेठी (उत्तर–प्रदेश)–227405

गतांक से आगे...

कौन चैन की नींद नहीं सो सकते और उसके उपाय

● प्रो. रामप्रसाद वेदालंकार

4. हृतस्वम्

जिसके "स्व" का–धन–वैभव का, जमीन–जायदाद का या किसी सम्बन्धी आदि का हरण किया जा चुका हो, या स्वयं ही उसका कुछ पदार्थ या कोई व्यक्ति खो गया हो, गुम हो गया हो, नष्ट हो गया हो, या जेब काट ली गई हो, अथवा आग पानी आदि द्वारा धन–जन आदि की हानि हो गई हो या अन्य किसी प्रकार से धन–वैभव आदि नष्ट हो गया हो, तो ऐसे व्यक्ति को भी प्रजागर– उन्निद्रता आ घेरती है।

इसी प्रकार किसी का अपना या किसी प्रियजन का स्वास्थ्य बिगड़ गया हो अथवा अपने या किसी प्रिय जन के स्वास्थ्य को किसी भयंकर रोग ने आ घेरा हो यद्वा कोई प्रियजन मृत्यु का ग्रास बन गया हो, अर्थात् स्वर्ग सिधार गया हो, इत्यादि ये सब बातें भी, मनुष्य को कई बार ऐसा बेचैन कर देती हैं कि उसे फिर नींद आ ही नहीं पाती।

ऐसी परिस्थितियों में रोने, चिल्लाने और चिन्ताओं को छोड़कर यथाशक्ति मनुष्य को कोई उपाय करना चाहिए और जी–जान से उपाय करने या प्रयत्न करने पर भी यदि वह हरण किया हुआ धन–वैभव, जमीन–जायदाद या खोया हुआ जन वा स्वास्थ्य या विनष्ट हुई धन–सम्पत्ति अथवा मरण को प्राप्त हुआ प्रियजन आदि हाथ न आ सके तो 'प्रभु' को ही ऐसा स्वीकार होगा, यह सोचकर सन्तोष कर लेने से या अन्य स्वाध्याय, सत्संग, भजन–पूजन आदि उपायों से अपने मन को उधर से हटाकर उपर्युक्त कारण से होनेवाली उन्निद्रता से मनुष्य मुक्त हो सकता है।

कई बार ऐसे अवसरों पर थोड़ा बहुत रो लेने पर भी दिल कुछ हल्का हो जाता है। अपने हृदय की व्यथा को अपने किसी प्रिय वा हितैषी व्यक्ति को सुनाने से भी हृदय का बोझ हलका होता हुआ देखा जाता है, परन्तु ये उपाय भी कुछ बहुत सुन्दर उपाय नहीं है और न ही दीर्घकाल तक इन उपायों को अपनाए रखना ही सम्भव हो सकता है। इसलिये उपाय तो जो ऊपर निर्देश किये गये हैं, वे ही सुन्दर और कल्याणकारी उपाय हैं। रो लेना और कुछ कह लेना या अपना दुख सुना देना भी इसलिये कुछ ठीक है ताकि ये घटनायें भीतर ही भीतर उस व्यक्ति को खा न जायें। क्योंकि रो लेने या कुछ अपने हितैषी प्रिय व्यक्ति को सुना लेने पर तो कोई तदनुकूल ढाढ़स भी बन्धा सकता है, महापुरुषों के जीवनों के उदाहरण आदि देकर वह समझा बुझा कर सान्त्वना भी दे सकता है। पर यदि अन्दर ही अन्दर वह व्यक्ति घुलता रहा तो उसका परिणाम बहुत भयंकर भी निकल सकता है। जैसे कई बार ऐसी अवस्था में मानव अपने नष्ट हुए धन–वैभव या समाप्त हुए अपने प्रिय व्यक्ति को तो क्या प्राप्त कर पाता है, उल्टा अपना स्वास्थ्य, आँखें वह और मस्तिक की दिव्य सामर्थ्यो को भी वह और अधिक खो बैठता है। ऐसा हमें जीवन में अनेकत्र देखने को मिलता है।

आज से कई वर्ष पूर्व अम्बाला छावनी में एक बार 15 दिन पर्यन्त प्रचार करने का अवसर मिला। एक सज्जन एक दिन मिलने आए। उन्होंने अपने अस्वास्थ्य की चर्चा की तथा साथ–साथ यह भी कहा कि–"अनेक डॉक्टरों से मैं चिकित्सा भी करा चुका हूँ। सहस्रों रुपये फीस और दवाओं पर भी मैं व्यय कर चुका हूँ, पर अभी तक कोई डॉक्टर, वैद्य मुझे नीरोग नहीं कर सका।" इस पर मैंने उसे दो एक सुयोग्य डॉक्टरों का सुझाव दिया। तब वे बोले, कि "अमुक डॉक्टर को भी मैं दो हजार रुपये दे चुका हूँ और अमुक से भी मैंने थोड़ी बहुत चिकित्सा कराई है, पर कुछ लाभ प्रतीत नहीं हुआ, उल्टा और ***'मर्ज़ बढ़ता गया ज्यों–ज्यों दवा की'*** वाली कहावत चरितार्थ होती रही।" इसके उपरान्त मैं मौन हो गया और वे भी इसके आगे कुछ नहीं बोले। पुनः कालान्तर में कभी मेरा वहाँ जाना हुआ तो वह सज्जन पुनः मुझे मिलने आए, परन्तु अब वह पूर्ण स्वस्थ थे। मेरे पूछने पर उसने उत्तर दिया कि–"मैं डॉक्टर, वैद्यों और हकीमों को सहस्रों रुपये देकर भी जब स्वस्थ नहीं हुआ, तो एक दिन इन सबसे निराश होकर मैं एक महात्मा जी की शरण में उपस्थित हुआ और उन्हें मैंने अपनी सारी व्यथा सुनाई। लगभग 15 वर्ष की मेरी इस लम्बी व्यथा को उन्होंने बड़े धैर्यपूर्वक श्रवण किया और श्रवण करने के उपरान्त उन्होंने मुझसे पूछा कि–"वैद्य डॉक्टर और हकीम आदि क्या रोग बतलाते हैं?" इस पर मैंने उत्तर दिया कि–"वे बतलाते हैं कि रोग तो कुछ प्रतीत नहीं होता।" तब महात्मा जी ने पूछा कि–"डॉक्टर–वैद्य–हकीम फिर इलाज किस रोग का करते रहे?" बस रोग की तो वे चिकित्सा ही क्या करते, जबकि उन्हें रोग का कुछ पता ही नहीं लगता था। पर तो भी वे मेरी दयनीय दशा को देखते हुए कभी हाजमे की, कभी ताकत की कोई न कोई दवा देते रहे या फिर कभी ताकत के इन्जेक्शन लगाते रहे, आदि–आदि।

वह साधु मेरी इस राम कहानी को सुनकर प्रथम तो कुछ शान्त बैठा रहा फिर धीरे से बोला कि–"जहाँ तक मैं समझता हूँ तुम्हें कोई शारीरिक रोग तो नहीं है, पर हाँ मानसिक कोई भयंकर कष्ट अवश्य है जो आपको भीतर ही भीतर खाये जा रहा है। इसलिये वह तुम्हें न हँसने देता है, न प्रसन्न रहने देता है, न सुख से सोने देता है, न वह तुम्हारे खाये–पीये को अच्छी तरह से हजम होने देता है, न ही उसे शरीर का अंग बनने देता है। इसलिये भली ही आप मुझे बताना चाहें या न बताना चाहें, पर मेरा यह हार्दिक निवेदन है कि आप उसे भूल जाईए, नहीं तो आपका कल्याण सम्भव नहीं है। इसके अतिरिक्त कल मुझ से एक औषधि की शीशी भी ले जाना।" दूसरे दिन मैं उनसे 15 दिन की औषधि ले आया। मुझे उससे बड़ा ही लाभ हुआ। 15 दिन के उपरान्त मैं पुनः उन्हीं के चरणों में जा पहुँचा और प्रसन्नता पूर्वक उनके चरणों में प्रणाम करके मैंने उनसे निवेदन किया–"महाराज! मुझे आपकी औषधि से बहुत लाभ हुआ है, अतः मुझे आप और औषधि दे दीजिए।" इस पर वह साधु मुस्कराया और बोला कि–"भोले! जाओ अब तुम्हें औषधि की आवश्यकता नहीं है क्योंकि औषधि तो तुम्हें मिल चुकी है।"

नहीं महाराज! मुझे आपकी औषधि से दिन दूना रात चौगुना लाभ हुआ है अतः मुझे वही औषधि आप और देने की कृपा करें। मेरे इस प्रकार निवेदन करने पर उस साधु ने कहा कि–"औषधि तो मैंने तुम्हें केवल सान्त्वना के लिये दी थी। वास्तव में लाभ तो तुम्हें उसी बात के त्यागने से हुआ है जो तुम्हारी जीवन शक्ति को निरन्तर घुन की तरह खाए जा रही थी, जो तुम्हारी नींद हराम किये हुए थी।" फिर भी मेरे पुनः–पुनः आग्रह करने पर उन्होंने मुझे उस औषधि का नाम और स्थान बता दिया और मैं वहाँ से खरीद कर उसका सेवन करता रहा। इस प्रकार अब मैं पूर्ण स्वस्थ हूँ।

मेरे यह पूछने पर, कि–'आखिर वह बात ऐसी क्या थी जिसके परिणाम में आपकी ऐसी दुर्गति हुई थी।' वह सज्जन बोला–"साधु से प्रथम बार मिलने पर उनकी बात मुझे ऐसी जँच गई कि मैं वहाँ से सीधा ही अपने घर आया और मैंने अपनी देवी जी से कहा कि–"देवी जी! आज के उपरान्त पाकिस्तान में रही हुई अट्टालिकाओं और उनमें रहे हुए धन–वैभवों की चर्चा भी कभी तुमने नहीं करनी और न ही मैं करूँगा क्योंकि उन धन–वैभवों की स्मृतियों ने ही हमारी नींद हराम कर रखी है, हमारा सुख–चैन हराम कर रखा है, हमें स्वास्थ्य से वंचित कर रोगों का घर बना दिया है और फिर उन धन–वैभवों की चिन्ताओं में पड़–पड़ कर प्रभु कृपा से जो हमें वर्तमान में उपलब्ध है उसका भी हम सन्तोषपूर्वक सेवन करके प्रभु का धन्यवाद नहीं कर पा रहे हैं। देखो देवी ! उस सब वैभव के चले जाने पर भी तो प्रभु कृपा से हमारे एक बेटे की दो बसें चल रही हैं, दूसरे बेटे की फैक्ट्री चल रही है। अनेक कर्मचारी फैक्ट्री में कार्य कर रहे हैं। रहने के लिये हमें इतना सुन्दर मकान उस प्रभु ने दे रखा है कि जिसमें आठ कमरे हैं, हर कमरे में पंखा लगा हुआ है, खाने–पीने के लिए सब प्रकार के खाद्य एवं पेय पदार्थ सदा उपस्थित रहते हैं। अन्य अनेक सुख–सुविधाओं से यह घर भरा हुआ है। प्रभु ने पुत्र–पुत्रियाँ ही नहीं बल्कि पोते–पोतियाँ, दोहते–दोहतियाँ भी प्रदान की हैं, उन सबके सम्यक् प्रकार से पालन–पोषण एवं पढ़ने–पढ़ाने के लिये प्रभु ने नाना प्रकार के समुचित साधन भी हमें प्रदान कर निहाल कर रखा है, तो फिर उस खोये हुए, पाकिस्तान में रहे हुए वैभव को समय–समय पर याद कर–कर के हम अपने वर्तमान के सुख को क्यों खोवें और दुःख को क्यों ढोवें।"

इस प्रकार तब उस व्यक्ति ने नष्ट हुए धन–वैभव की चिन्ताओं से मुक्त होकर सुख–चैन का जीवन पाया। वह सुख की नींद सो सका, खाए पिये को पचा सका और पचाये हुए पदार्थों को अपने शरीर का अंग बना सका, आए–गए से प्रसन्नतापूर्वक मिल सका, उनका हार्दिक स्वागत– सत्कार कर सका। जिन पोते–पोतियों को गोदी में ले–लेकर अपने कर्मों को रोते हुए, अपने भाग्य को कोसते हुए सदा उदास और निराश चेहरे से वह इधर–उधर घूमा करता था, आज उन्हीं बच्चों को गोद में ले–लेकर वह अपनी वर्तमान की उपलब्धियों का, सुख–सौभाग्यों का प्रसन्नतापूर्वक सेवन करते हुए सर्वत्र हँसता और हँसाता है, प्रसन्नतापूर्वक सबकी आव–भगत करता है, तथा प्रभु का विभोर होकर धन्यवाद करता है। अतः जो इस कारण से सुख–चैन की नींद नहीं सो सकते हों, उन्हें चाहिए कि वे इस घटना से कुछ पाठ सीखें और जीवन को साहस पूर्वक बदल कर सुख–शान्ति की नींद सोवें।

क्रमशः

(लेखक की पुस्तक)
'महान विदुर के उपदेश' से साभार

हिन्दू राज्य ही क्यों?

● पं. क्षितीश वेदालंकार

'तुम्हारे जैसा सुशिक्षित, प्रखर राष्ट्रवादी और देशभक्त व्यक्ति भी हिन्दुत्व, हिन्दू राज्य और प्राचीन दकियानूसी परम्पराओं की बात करने लगे, तो देश का उद्धार हो चुका!'

जब एक अत्यन्त घनिष्ठ और सदाशयी मित्र ने इस प्रकार की बात कही, तब आश्चर्य उतना नहीं हुआ, जितना क्षोभ हुआ। हम जानते हैं कि राजनीति में किसी को सबसे बड़ी गाली देनी हो, तो उसके लिए केवल तीन शब्द काफी हैं–सम्प्रदायवादी, साम्राज्यवादी और प्रतिक्रियावादी। प्रायः राजनीतिज्ञ लोग अपने से इतर दलों से सम्बद्ध लोगों को उक्त तीन अपशब्दों से सम्बोधित करके ही समझते हैं कि उन्होंने मैदान मार लिया।

इन लोगों की दृष्टि में हिन्दू शब्द ही साम्प्रदायिकता का वाचक है, हिन्दू–राज्य शब्द का प्रयोग विशुद्ध साम्राज्यवादी मनोवृत्ति का परिणाम है; और औद्योगिक क्रान्ति तथा विज्ञान–प्रधान आधुनिक युग में जब कोई प्राचीन परम्पराओं की बात करता है, तो वह सिवाय प्रतिक्रियावादी के और कुछ नहीं हो सकता।

पर क्या वस्तुस्थिति यही है?

हम ज़ोर देकर कहेंगे–नहीं, हरगिज़ नहीं। न तो हिन्दू शब्द साम्प्रदायिक है, न ही 'हिन्दू राज्य' शब्द साम्राज्यवाद या विस्तारवाद का परिचायक है, और न प्राचीन परम्पराओं की बात करना प्रतिक्रियावाद है।

संक्षेप से एक–एक बात को लें। **सबसे पहले हमारा निवेदन यह है कि हिन्दू शब्द किसी सम्प्रदाय, पंथ या मजहब का द्योतक नहीं।** सच तो यह है कि आजकल जिसे मजहब या Religion कहा जाता है, उस अर्थ में धर्म शब्द का प्रयोग ही ग़लत है। 'धर्म' शब्द का शास्त्रीय अर्थ है–धारण करने वाला (**'धारणाद् धर्म इत्याहुः'**); जिसने मानवता को धारण किया हुआ है, जिसके कारण मानवता टिकी हुई है, उसका नाम धर्म है। इसका सम्बन्ध न किसी व्यक्ति–विशेष के साथ है, न किसी सम्प्रदाय–विशेष के साथ। संसार के सभी मानव परस्पर भ्रातृत्व और मानवता के बन्धन से बँधे हैं। मानवता एक है, तो उसका धर्म भी एक ही है। उस धर्म का नाम भी है मानव–धर्म, अर्थात् मनु–प्रतिपादित धर्म। क्या गाय का धर्म गोत्व के सिवाय कुछ और हो सकता है? या वृक्ष का धर्म वृक्षत्व के सिवाय कुछ और? वह मानव–धर्म सार्वत्रिक, सार्वभौमिक और सार्वकालिक होना चाहिए। स्वयं मनु ने उस धर्म का प्रतिपादन इन शब्दों में किया है–

धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम्।।

श्लोक की शब्दावली इतनी सरल है कि अलग से इसका अर्थ करने की आवश्यकता नहीं। हम पूछते हैं कि बाइबल के **'सरमन ऑन द माउंट'** में, या योग–दर्शन के यम और नियम में, या बौद्धों के पंचशील और **'चत्वारि आर्यसत्यानि'** में, अथवा जैनियों के पाँचों अणुव्रतों में और इस्लाम के ***रोजा–जकात–नमाज*** आदि में क्या अन्तर है? निस्सन्देह, संसार के सब मतों की सब बातें आपस में नहीं मिलतीं, पर कुछ बातें अवश्य मिलती हैं, इससे इन्कार नहीं किया जा सकता। इसलिए सार्वभौम मानव–धर्म का पता लगाने लिए सबसे सरल उपाय यह है कि इन सब मतों में जितनी भी समान बातें हैं, उन सबको एकत्र कर लें तो हम देखेंगे कि उन सबका समावेश मनु–प्रतिपादित दस लक्षणों में हो जाता है। इसलिए मानव–धर्म की कसौटी यह है कि सब मतों में जो महत्तम समापवर्तक है–Highest Common Factor (HCF) है, वही मानव–धर्म है। हिन्दू भी यदि धर्म है, तो उससे भिन्न नहीं है। ऐसे धर्म में साम्प्रदायिकता की शंका करना स्वयं मानवता में और मानवबुद्धि में शंका करना है।

पर हम तो यहाँ इससे भी आगे बढ़कर एक और स्थापना करना चाहते हैं; और वह स्थापना यह है कि हिन्दू नाम का धर्म नहीं, देश है। धर्म के लिए 'हिन्दू' का प्रयोग गौण है, मुख्य रूप से उसका वाचक देश ही है। अगर यह सत्य–स्थिति स्वीकार कर ली जाए तो न केवल हिन्दू शब्द से साम्प्रदायिकता का आरोप स्वतः हट जाएगा, वरन उसका स्वरूप भी व्यापक हो जाएगा, अनेक समस्याओं का अनायास समाधान हो जाएगा और यह शब्द भी एक नई आभा से मंडित हो उठेगा। हम जानते हैं कि आज तक हिन्दू शब्द की जितनी परिभाषाएँ की गई हैं उनमें अव्याप्ति या अतिव्याप्ति का दोष रहा है और वे सर्वमान्य नहीं हो पाई हैं पर वैज्ञानिक दृष्टिकोण यही है कि जिस मान्यता से अधिकतम समस्याओं का अधिकतम समाधान हो सके, उसे मान लेना चाहिए।

1965 की बात है। उस समय समस्त संसार में भारतीय दर्शन और भारतीय संस्कृति के सबसे प्रबल प्रवक्ता डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन भारत के राष्ट्रपति थे। 26 जनवरी के गणराज्य–दिवस की पूर्व–संध्या को (25 जनवरी की रात को) उन्होंने सारे राष्ट्र के नाम जो संदेश आकाशवाणी से प्रसारित किया था. उसमें उन्होंने संस्कृत के एक श्लोक का उच्चारण किया था, जिसे सुनकर हम तो हर्ष–विह्वल हो उछल पड़े थे। यदि सारा राष्ट्र अपने राष्ट्रपति की उस चिन्तनशैली को स्वीकार कर ले, तो न जाने राह के कितने काँटे स्वयं साफ हो जाएँ। वह श्लोक इस प्रकार था–

हिमालयं समारम्य यावदिन्दु–सरोवरम्।
हिन्दुस्थानमिति ख्यातमाद्यन्ताक्षर–योगतः।

हिमालय से लेकर इन्दु सरोवर (कन्या कुमारी) पर्यन्त, हिमालय के आदि अक्षर **(हि)** और इन्दु के अन्तिम अक्षर **(न्दु)** को मिलाकर बना हिन्दु शब्द हिन्दुस्थान का वाचक है।

यह श्लोक 'कुलार्णव तन्त्र' का बताया जाता है। इसी प्रकार का एक अन्य श्लोक कुछ पाठ–भेद के साथ बार्हस्पत्य शास्त्र का भी दृष्टिगोचर होता है–

हिमालयं समारम्य यावदिन्दु–सरोवरम्।
तं देवनिर्मितं देशं हिन्दुस्थानं प्रचक्षते।।

हिमालय से इन्दु सरोवर पर्यन्त इस देवनिर्मित देश को हिन्दुस्थान कहते हैं। हिन्दुस्थान देवनिर्मित देश क्यों है? इसलिए कि न तो हिमालय मनुष्य–निर्मित है और न ही हिन्द महासागर मनुष्य–निर्मित है। दोनों देव–निर्मित अर्थात् प्रकृति–प्रदत्त अथवा ईश्वर–निर्मित हैं। जिसकी सीमाएँ स्वयं देव–निर्मित हों, ऐसा सौभाग्य और कितने देशों को प्राप्त है? विष्णु पुराण में तथा श्रीमद्भागवत पुराण में इस भारतभूमि की प्रशंसा में जो कुछ कहा गया है, उसके उद्धरण हम यहाँ जान–बूझकर नहीं दे रहे हैं। कहने का अभिप्राय यह है कि हिन्दू नाम का देश है, यह हमारी कोरी कल्पना नहीं बल्कि इसका शास्त्रीय आधार है।

अगली बात हम यह कहेंगे कि न केवल इस देश का नाम हिन्दू है, प्रत्युत इसके निवासियों का नाम भी हिन्दू है। यहाँ हम साहित्यशास्त्र की **तात्स्थ्योपाधि** का उल्लेख करेंगे। काव्य–शास्त्र के मर्मज्ञों को समझाने की आवश्यकता नहीं कि जब वक्ता को यह कहना अभीष्ट होता है कि 'मंच पर बैठे लोग पुकार रहे हैं' (**मञ्चस्थाः क्रोशन्ति**), तब वह केवल इतना ही कहकर अपनी बात को भली–भाँति प्रकट कर देता है कि 'मंच पुकार रहे हैं' (**मञ्चाः क्रोशन्ति**)। जैसे 'मंच पर बैठे हुए लोगों' को केवल 'मंच' शब्द से अभिहित किया गया, वैसे ही हिन्दू देश में स्थित लोगों को भी केवल 'हिन्दू' शब्द से सम्बोधित किया गया इसलिए हिन्दू शब्द का अभिप्राय हुआ भारतीय।

सीधा प्रश्न होगा कि तो क्या भारत में रहने वाले किसी भी मतावलम्बी को 'हिन्दू' कहा जाएगा? हमारा उत्तर है–"क्यों नहीं?" प्रत्येक भारतवासी को, फिर चाहे वह इस्लाम, ईसाइयत या किसी भी मत का मानने वाला क्यों न हो, किसी भी जाति, कुल, वंश, वर्ण, रंग और प्रदेश का हो, उसे अपने–आपको स्वाभाविक रूप से, जन्मना, भारतीय अर्थात् हिन्दू कहने का अधिकार ही नहीं, विशेषाधिकार है, हिन्दू अर्थात् भारतीय। पर हाँ, भारत का प्रत्येक निवासी हिन्दू तो है, पर भारत का निवासी होने मात्र से उसे इस देश की नागरिकता का या वोट का अधिकार प्राप्त नहीं हो जाता। नागरिकता की पहली शर्त है–जिस देश के आप नागरिक हैं उसके प्रति पूर्ण वफादारी। यदि भारत के प्रति आपकी वफादारी दूसरे दर्जे पर है, पहले दर्जे पर वफादारी मक्का–मदीना, बैतुलहम या जेरुसलम के प्रति है तो यह नागरिकता की शर्त का उल्लंघन है। और जब नागरिकता नहीं, तो वोट का अधिकार कैसा?

आज तक स्वतन्त्र भारत के जितने प्रधानमन्त्री हुए हैं, वे सब 15 अगस्त के स्वाधीनता–दिवस पर लाल किले की प्राचीर से सदा विशाल जन–समुदाय से 'जय हिन्द' का नारा लगवाते रहे हैं। जब 'जय हिन्द' हमारा राष्ट्रीय नारा है, तब 'जय हिन्दू' में अराष्ट्रीयता कैसे हो सकती है? गुलगुले खाएँ और गुड़ से परहेज? यह सरासर आत्मवंचना है। भाषाशास्त्र, साहित्यशास्त्र, समाजशास्त्र, इतिहास, भूगोल और परम्परा–इन सभी दृष्टियों से हिन्द, हिन्दू, हिन्दी–ये तीनों परस्पर अविनाभाव रूप से जुड़े हैं; इन्हें अलग नहीं किया जा सकता। वीर सावरकर ने यदि हिन्दी, हिन्दू, हिन्दुस्तान का नारा लगाया था, या महर्षि दयानन्द सरस्वती ने आर्यावर्त, आर्य–भाषा और आर्य शब्द के गौरव को जगाया था, या आधुनिक राजनीतिशास्त्र–विचक्षण जिसे भारत, भारती और भारतीय कहना पसन्द करेंगे उन सबका एक ही अर्थ है, उनमें कहीं कोई अन्तर नहीं है। तो यह समीकरण यों बनेगा–

आर्यभाषा, आर्य, आर्यावर्त
भारती, भारतीय, भारत
हिन्दी, हिन्दू, हिन्दुस्थान (हिन्द)

यदि आर्य भाषा और भारती के स्थान पर हिन्दी शब्द अपने लोकानुसारी

शेष पृष्ठ 08 पर ☞

स्वामी श्रद्धानन्द जी का श्रद्धाभरा उत्तर

● भद्रसेन

वे एक बार गुरुकुल कांगड़ी में अंग्रेज़ सरकार का एक विशेष अधिकारी निरीक्षण के लिए आया। उन दिनों महात्मा मुंशीराम स्वामी (श्रद्धानन्द जी) स्वयं ही गुरुकुल का संचालन कर रहे थे अतः स्वामीजी उसको संस्था का परिचय, दर्शन करा रहे थे। अपने सरकारी प्रभाव का प्रदर्शन करते हुए अधिकारी ने स्वामी जी से सीधे ही पूछ लिया कि आप केवल यहाँ पढ़ाते ही नहीं, अपितु आप के इस शिक्षणालय में बम भी गुप्त रूप से तैयार किए जाते हैं।

इस पर स्वामी जी ने बड़े आत्मविश्वास के साथ स्वाभिमान पूर्वक एकदम उत्तर दिया, कि आप ने ठीक ही सुना है। हाँ, हम गुप्त रूप से नहीं, अपितु खुले आम ही यह सब करते है। तब स्वामी जी ने गुरुकुल के एक ब्रह्मचारी की ओर संकेत करते हुए कहा–"हमारा एक–एक छात्र शिक्षित हो कर देश के प्रति पूरे स्वाभिमान से भरा हुआ है अतः एक बम से बढ़ कर अंग्रेज़ सरकार द्वारा पैदा की गई पराधीनता के परखचे उड़ाने में सर्वथा समर्थ है, रहेंगे। किसी राष्ट्र के स्वाभिमानी नागरिक ही उसके सर्वस्व होते हैं। देश का मान–सम्मान, गौरव–गरिमा उन्हीं पर निर्भर होती है।"

इस उत्तर में एक महत्वपूर्ण तथ्य यह भी छिपा है कि विद्यार्थीकाल की शिक्षा ही किसी के जीवन निर्माण का एक विशेष आधार स्तम्भ है यदि उसकी पूरी रूपरेखा योजनाबद्ध बनाई जाए।

इस घटना की स्पष्टता के लिए ज्ञातव्य कुछ बातें–

1. महर्षि दयानन्द के देहान्त का समाचार प्रथम नवम्बर 1883 तक साधारण जन के पास भी पहुँच गया था।
2. अपनी संवेदनशीलता के कारण पंजाब के आर्यों ने महर्षि की याद को स्थायी रूप देने के लिए विचार–विमर्श प्रारम्भ कर दिया।
3. पहला निर्णय यह हुआ कि आर्यसमाज के संचालन के साथ शिक्षा प्रसार का कार्य प्रारम्भिक स्तर से किया जाए।
4. 1884 से शिक्षा समिति प्रकाश में आने लगी।
5. 'दयानन्द ऐंग्लो वैदिक' नाम से 1886 से स्कूल की पढ़ाई प्रारम्भ कर दी गई।
6. इसी काल में श्री देवराज जी की अगवाई में श्री मुंशीराम आदि आर्यो ने कन्या विद्यालय का कार्य करना शुरु कर दिया।
7. इन्हीं दिनों महर्षि दयानन्द द्वारा दर्शाई गई 'गुरुकुल' योजना की चर्चा आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब में चली।
8. सभा में प्रस्ताव पारित हुआ। श्री मुंशीराम जी ने झोली उठाई और धन संग्रह की यात्री की।
9. पहले मुलतान में, फिर हरिद्वार के समीप **'कांगड़ी'** में भूमि दान में मिलने पर वहाँ गुरुकुल की स्थापना की गई।
10. स्वयं महात्मा मुंशी राम जी ने वहाँ रह कर उस जंगल को मंगल बनाना शुरु किया।
11. इस प्रकार झोंपड़ी से आज का विश्वविद्यालय वाला रूप प्रकाश में आया।
12. अंग्रेज़ सरकार की कांगडी़ गुरुकुल जैसी भारतीय भावना रखने वाली संस्थाओं पर सदा सन्देह भरी ही दृष्टि रही। आर्यसमाज प्रारम्भ से ही स्वाधीनता के प्रति सजग, व क्रियाशील रहा।

महर्षि ने अपनी योजना को पूर्ण करने के लिए अनेक बार संस्कृत पाठशालायें खोलीं पर वे सफल नहीं हुई। अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश में गुरुकुल पद्धति का पूरा चित्रण दिया है। इस गुरुकुल परम्परा को प्रगति पथ पर लाने के लिए श्री मुंशीराम जी ने बीड़ा उठा लिया। केवल दूसरों से ही धनसंग्रह नहीं किया अपितु इस कार्य को सफल बनाने के लिए अपना, बच्चों और कोठी का क्रमशः दान कर सर्वस्व दानी बन गए। 1917 में संन्यास लेकर गुरुकुल आचार्य रामदेव जी को सौंप दिया। स्वयं परिव्राजक बन आर्यसमाज संचालन, शुद्धि आन्दोलन, दलित- उद्धार, स्वाधीनता संग्राम, भारतीयों का संगठन जैसे कार्य सारे भारत में करने लगे।

पृष्ठभूमि

भारत एक प्राचीन और विशाल देश है। प्रारम्भ से ही यहाँ प्रशासन अनेक विभागों में विभक्त रहा है। देश वासियों की असावधानियों के कारण विदेशियों के आक्रमण आरम्भ हो गए। जो पहले केवल लूट तक सीमित रहे। फिर राजा बन बैठे। मुसलिमों ने धर्मान्तरण भी चलाया। इसके बाद अंग्रेज़ आ धमके। 1947 में भारत को दो भागों में बाँट कर चले गए।

आर्यसमाज की स्थापना–1875 में महर्षि दयानन्द ने आर्य समाज में नवजागरण लाने के लिए आर्यसमाज की स्थापना की। महर्षि का बचपन का नाम मूल शंकर था, 21 वर्षीय मूल सच्चे शिव के दर्शन और मृत्यु के रहस्य के बोध का संकल्प लेकर घर से निकले। स्थान–स्थान पर जाकर गुरु की खोज की। इस काल में जिसने जो पढ़ाया सो पढ़ा, जिसने जैसा योग सिखाया सो सीखा। अन्त में मथुरा जाकर संन्यासी दयानन्द ने ब्रह्मर्षि विरजानन्द जी दण्डी को गुरु रूप में स्वीकार किया। वहाँ जब तीसरे वर्ष (1863) में विदा वेला में श्री चरणों में पहुँचे, तब गुरु ने पूर्व संकल्पों को परोक्ष में करा कर आर्ष ज्ञान की ज्योति जगाने का व्रत धारण करा दिया। इस व्रत को साधते हुए अड़तीस वर्षीय दयानन्द स्वामी एक नगर से दूसरे नगर गए। इस ज्योति को सदा जगाये रखने के लिए 1875 में आर्यसमाज की स्थापना की। वेद प्रचार करते हुए 1879 में महर्षि बरेली भी पधारे। स्वामी जी के भाषणों की व्यवस्था पर आँख रखने का कार्य श्री नानक चन्द को सौंपा गया था। जब उन्होंने स्वामी जी का भाषण संयोगवश सुना। तो उनके मन में आया, यही संन्यासी मेरे युवा पुत्र को सीधे रास्ते पर ला सकते हैं।

शिक्षा से स्वाधीनता तक

श्री नानक चन्द जी पुलिस विभाग में कार्य करते थे। उनके पुत्र का नाम मुंशी राम था जिसका जन्म, जालन्धर {पंजाब} के समीपवर्ती ग्राम तलवन में हुआ। शिक्षा उत्तर प्रदेश के विविध नगरों में हुई। 23 वर्षीय मुंशी राम ने पिता के विशेष कहने पर महर्षि दयानन्द के भाषण बरेली में जब सुने तब वह बहुत ही प्रभावित हुआ। वक्ता की सारी दिनचर्या परखी। कुछ दिन अंग्रेज़ सरकार की नौकरी की, पर पसंद नहीं आई। तब लाहौर में कानूनी पढ़ाई की। जालन्धर में वकालत शुरु की। क्रमशः आर्य समाज और आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के प्रधान बने।

महर्षि ने अपनी योजना को पूर्ण करने के लिए अनेक बार संस्कृत पाठशालायें खोलीं पर वे सफल नहीं हुई। अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश में गुरुकुल पद्धति का पूरा चित्रण दिया है। इस गुरुकुल परम्परा को प्रगति पथ पर लाने के लिए श्री मुंशीराम जी ने बीड़ा उठा लिया। केवल दूसरों से ही धनसंग्रह नहीं किया अपितु इस कार्य को सफल बनाने के लिए अपना, बच्चों और कोठी का क्रमशः दान कर सर्वस्व दानी बन गए। 1917 में संन्यास लेकर गुरुकुल आचार्य रामदेव जी को सौंप दिया। स्वयं परिव्राजक बन आर्यसमाज संचालन, शुद्धि आन्दोलन, दलित–उद्धार, स्वाधीनता संग्राम, भारतीयों का संगठन जैसे कार्य सारे भारत में करने लगे।

स्वामी जी का संगठन कार्य कुछ को सुहाया नहीं, अतः स्वार्थी वर्ग उनके विरोध पर उतर आया। जिसके परिणाम स्वरूप एक भड़के हुए मतान्ध ने उनको गोलियाँ चला कर 23 दिसम्बर 1926 को कार्यक्षेत्र से हटा दिया।

182 शालीमार नगर,
होशियारपुर–146001

आवश्यकता है

आर्य समाज रोहिणी, दिल्ली को पार्ट टाइम क्लर्क की आवश्यकता है जिसे बेसिक हिन्दी व अंग्रेज़ी कम्प्यूटर (MS Off. & DTP Work) का अनुभव होना जरुरी है।

इच्छुक अभ्यर्थी सम्पर्क करें।

संपर्क सूत्र : 9311201046, 7838913050, 9818530395

वैदिक साहित्य में श्रीराधा-भाग 1

● श्री कृतेश पटेल

हमने अब तक देखा कि कैसे पुराणों के जो प्रमाण देकर देवी राधा की ऐतिहासिकता सिद्ध करने का यत्न किया गया है, पुराणों के वे विभाग बारहवीं शताब्दी अथवा उसके अनेक वर्षों बाद के रचे हुए सिद्ध होते हैं इसलिए देवी राधा की प्राचीनता सिद्ध करने के लिए ये पुराणग्रन्थ निरुपयोगी सिद्ध होते हैं।

तत्पश्चात् राधामार्गी सम्प्रदायों के द्वारा देवी राधा को प्राचीन और वैदिक सिद्ध करने के लिए अनेक प्रकार के वैदिक साहित्य का भी सहारा लिया जाता है। मुख्यतः वेद और कुछ नवीन उपनिषदों में से 'राधा' शब्द उठाकर यह दिखाया जाता है कि वैदिक काल से देवी राधा की पूजा होती रही है। हालाँकि यह सिद्धान्त है कि वेद में कोई इतिहास नहीं है और इतिहास में यदि श्रीराधा नाम की कोई महिला हुई भी हो, तो भी उनका इतिहास वेद में नहीं मिल सकता। किन्तु राधामार्गी सम्प्रदाय के अनुयायियों में वेद का पठन–पाठन न के बराबर है। इसी कारण वे लोग इस प्रकार के भ्रमयुक्त वचनों के शिकार हो जाते हैं।

राधामार्गी सम्प्रदाय के द्वारा दो उपनिषदों का प्रमाण दिया जाता है–**राधोपनिषद् और राधिकातापनीयोपनिषद्।** राधोपनिषद् का सम्बन्ध अथर्ववेद के साथ बताया जाता है, किन्तु अथर्ववेद के प्राचीन संस्करणों में इसका कोई वर्णन नहीं मिलता। न ही अथर्ववेदीय ब्राह्मणों के द्वारा इसका पठन–पाठन कराया जाता है। यह उपनिषद् किसी राधामार्गी सम्प्रदाय के आचार्य द्वारा रचित प्रतीत होता है।

पद्मभूषण पण्डित बलदेव उपाध्याय जी ने इस उपनिषदों का समयकाल सत्रहवीं शताब्दी के बाद का माना है। इसका हेतु देते हुए वे लिखते हैं कि यदि यह उपनिषद् प्राचीन होता, तो गौड़ीय गोस्वामियों की रचनाओं में इसका वर्णन अवश्य होता। ऐसे सुस्पष्ट वचनों का उद्धरण न देना आश्चर्य की ही बात है।

इस उपनिषद् की भाषा भी वैदिक नहीं है। राधोपनिषद् केवल तेरह मन्त्रों का है और इसकी शैली गद्यात्मक है। इस उपनिषद् का प्रारम्भ इस प्रश्न से होता है कि ***"ब्रह्मवादिन लोग देवी राधा की उपासना किसलिए करते हैं।"*** तत्पश्चात् के मन्त्रों में देवी राधा की महिमा का वर्णन है। इस उपनिषद् में देवी राधा को समस्त भूतों और देवताओं की जननी बताया गया है। इतना ही नहीं, वेद, उपनिषद्, सांख्य और वेदान्त आदि दर्शन भी देवी राधा के ब्रह्मत्व की चर्चा करते हैं–ऐसा दावा किया गया है।

हालाँकि सांख्य और वेदान्त दर्शन में कहीं भी देवी राधा का वर्णन नहीं है। ये दोनों दर्शन निराकार ब्रह्म को ही मानते हैं। इसी प्रकार वेद में भी देवी राधा के ब्रह्मत्व की चर्चा नहीं है। अतः इस उपनिषद् में किया गया यह दावा साम्प्रदायिक और असत्य है। यह समग्र उपनिषद् ऐसी अनेक गप्पों से भरा हुआ है।

इसके अन्तिम मन्त्र में इस उपनिषद् की एक नकली गुरुपरम्परा भी दी गई है, जिसके अनुसार आदित्य, वशिष्ठ, बृहस्पति और इन्द्र आदि के द्वारा इस उपनिषद् का पठन–पाठन किया गया था। परन्तु इस कल्पित परम्परा का कोई प्रमाण नहीं मिलता। स्पष्ट है कि राधामार्गी सम्प्रदायों ने इस उपनिषद् की रचना करते समय यह परम्परा भी कल्पित कर ली थी।

इसी प्रकार राधिकातापनीयोपनिषद् भी अत्यन्त आधुनिक है। पण्डित बलदेव उपाध्याय जी इसे भी सत्रहवीं शताब्दी के अनन्तर का मानते हैं। राधिकातापनीयोपनिषद् की लोकप्रियता और भी कम है। इस उपनिषद् पर कोई प्राचीन संस्कृत अथवा भाषाटीका भी उपलब्ध नहीं होती, जो सिद्ध करता है कि यह उपनिषद् कभी विद्वत्–चर्चा का अंग नहीं रहा और सम्पूर्णतः कल्पित है।

यह उपनिषद् श्लोकात्मक है और इस पर भक्तिमार्ग का स्पष्ट प्रभाव दिखाई देता है। इसमें भी केवल बारह मन्त्र हैं तथा इसमें भी देवी राधा को पराशक्ति और समस्त वेद–उपनिषदों में वर्णित बताया गया है। इसका भाव भी राधोपनिषद् के समान ही है, अन्तर केवल इतना है कि यह उपनिषद् काव्यात्मक है।

राधा शब्द की व्युत्पत्ति 'राध्' धातु से मानी जाती है और कहा गया है– **"कृष्णेन आराध्यते इति राधा। कृष्णं समाराधयति सदा इति राधिका गान्धर्वीति व्यपदिश्यते।"** अर्थात् कृष्ण के द्वारा जो आराधित है, वह राधा है और जो सदा कृष्ण की आराधना करती है, वह राधिका है। 'गान्धर्वी' शब्द से उसी का निर्देश किया गया है।

'गान्धर्वी' शब्द गोपाल तापनी उपनिषद् में मिलता है। इस पर रूप गोस्वामी ने उपर्युक्त अर्थ किया है। गोपालतापनीयोपनिषद् भी मध्यकालीन है तथा राधामार्गी सम्प्रदाय की ही रचना प्रतीत होती है। इसमें यह लिखा है कि जो राधिका की अवहेलना करके श्रीकृष्ण की आराधना करता है, वह महामूर्ख ही नहीं, अपितु मूढ़तम है। इसके अनन्तर देवी राधा के अट्ठाईस नामों का भी वर्णन है तथा उनकी शक्ति का भी प्रतिपादन किया गया है। यह समस्त वर्णन सिद्ध करता है कि यह उपनिषद् बहुत बाद की रचना है।

इस प्रकार राधोपनिषद्, राधिकातापनीयोपनिषद् और गोपालतापनीयोपनिषद् के अनुशीलन से यह सिद्ध होता है कि ये रचनाएँ वैदिक काल की नहीं हैं। अनेक सम्प्रदाय अपनी साम्प्रदायिक मान्यताओं की पुष्टि के लिए इस प्रकार की रचनाएँ करते रहे हैं। इसी प्रवृत्ति का उपहास करने के लिए महर्षि दयानन्द सरस्वती ने एक **'गर्दभतापनीयोपनिषद्'** की रचना की थी। महर्षि दयानन्द यह सिखाना चाहते थे कि केवल 'उपनिषद्' नाम रख देने मात्र से कोई ग्रन्थ वैदिक काल की रचना नहीं हो जाता।

क्रमशः

मो. 9978111885

☞ पृष्ठ 06 का शेष

हिन्दू राज्य ही क्यों ?

प्रयोग के बल से सर्वस्वीकृत हो गया तथा उसे राष्ट्रभाषा और राजभाषा का पद प्राप्त हो गया, और हिन्द शब्द 'जयहिन्द' में प्रतिष्ठित होकर राष्ट्रीय जयघोष बन गया; तब फिर हिन्दू शब्द को अराष्ट्रीय और साम्प्रदायिक कहने वाले व्यक्ति की बुद्धि के लिए क्या कहा जाए?

रही बात हिन्दू राज्य की। जब हिन्दू शब्द भारतीय का वाचक हो गया, तब इस बात में किसी को क्या आपत्ति हो सकती है कि भारत में भारतीयों का राज्य हो? शर्त यही है कि भारत देश, भारतीय धर्म, भारतीय संस्कृति और भारतीय पूर्वजों की उदात्त परम्परा से अपने–आपको जोड़ना होगा। हिन्दुत्व में सदियों के ऐतिहासिक काल–प्रवाह में जो कूड़ा–कर्कट जमा हो गया है, उसे निकाल फेंको! तुम्हारी वैज्ञानिक बुद्धि, राष्ट्रभक्ति से ओत–प्रोत अन्तःकरण और राजनैतिक अभिनिवेश (दुराग्रह) से परे लोक–कल्याणकारी दृष्टि जिसे सही समझती है, वही हिन्दुत्व है, वही आधुनिक धर्म है; और उसी की स्थापना के लिए हिन्दू राज्य का औचित्य है।

अब प्रश्न यह है कि हम जिस हिन्दू राज्य की वकालत कर रहे हैं, वह कोई धार्मिक राज्य (Theocratic State) होगा या धर्मनिरपेक्ष राज्य (Secular State)? इस प्रश्न का उत्तर यह है कि केवल हिन्दू राज्य ही सही अर्थों में सम्प्रदाय–निरपेक्ष राज्य ('धर्मनिरपेक्ष' शब्द का प्रचलन गलती से हो गया है, इसके स्थान पर 'सम्प्रदाय–निरपेक्ष' या पन्थनिरपेक्ष शब्द चलना चाहिए) हो सकता है। क्योंकि **'एकं सद् विप्रा बहुधा वदन्ति' 'यत्र विश्वं भवत्येकनीडम्'** और **'शृण्वन्तु सर्वे अमृतस्य पुत्राः'** जैसी सार्वभौम और असाम्प्रदायिक भावना सिवाय हिन्दुत्व के और कहाँ है? और जिस प्रकार हिन्दुओं ने अपने देश में पारसियों, यहूदियों, ईसाइयों और मुसलमानों को ससम्मान स्थान दिया है, वैसा आज तक संसार के और किस देश ने किया है?

हिन्दुओं को छोड़कर अन्य सब मत–मतान्तर अपने धर्म में अक्ल के दखल को स्वीकार नहीं करते। केवलमात्र हिन्दू ही हैं जिनका धर्म डिण्डिम–घोष के साथ कहता है– **'यस्तर्केणानुसंधत्ते स धर्मं वेद नेतरः'**–तर्क से अनुसन्धान करने वाला ही धर्म को जानता है। एक तरफ ऐसे धर्म हैं जो ज्ञान–वृक्ष के फल के आस्वादन को पाप मानते हैं, दूसरी तरफ हिन्दू हैं जो कहते हैं कि वेद का अर्थ ही ज्ञान है। **'धीः'** तथा **'विद्या'** अर्थात् बुद्धि और उसके विकास द्वारा प्राप्त ज्ञान–विज्ञान को धर्म के दस मौलिक लक्षणों में गिनने वाले हिन्दुओं के सिवाय और कौन हैं?

इसलिए हमारा कहना यह है– धर्मनिरपेक्षता का विचार संसार को हिन्दुओं की ही देन है। हिन्दू राज्य धर्म–विहीन नहीं, किन्तु सम्प्रदाय–निरपेक्ष अवश्य होगा। इसका सबसे बड़ा प्रमाण स्वयं भारतवर्ष है। यह देश तभी तक धर्मनिरपेक्ष है, जब तक यह हिन्दू–बहुल है। जिस दिन इस देश में अपने–आपको हिन्दू कहने वाले अल्पसंख्यक हो जाएँगे, उस दिन यह देश धर्मनिरपेक्ष भी नहीं रहेगा। हम पूछते हैं कि मलयेशिया में केवल 51 फीसदी मुसलमान हैं, फिर भी उसे मुस्लिम देश घोषित कर दिया गया है, जबकि भारत में 85 फीसदी हिन्दुओं का निवास है (हिन्दू का अर्थ देश मान लेने पर तो यहाँ 100 फीसदी हिन्दू ही रहते हैं), फिर भी इसे हिन्दू राज्य घोषित नहीं किया जाता। अपने–आपको धर्म–सापेक्ष और साम्प्रदायिक कहलाने का यह भय धर्मनिरपेक्षता की अनुचित पराकाष्ठा है।

शेष पृष्ठ 09 पर ☞

☞ पृष्ठ 02 का शेष

एक ही रास्ता

भारत का रिवाज नहीं है।"

बादशाह ने झेंपकर कहा, "अच्छा बोलो तुम क्या खाओगे?" बच्चे ने कहा, "मैं तो छोटा–सा बालक हूँ, मुझे दूध ही अच्छा लगता है।" बादशाह ने कटोरे में दूध मँगवाया। आ गया दूध; बच्चे को देकर कहा, "पियो बच्चे !" बालक ने कटोरे को लेकर उसके अन्दर झाँका, इधर–उधर उसको देखा, फिर अँगुली डालकर उसमें से कोई वस्तु ढूँढने लगा। बादशाह ने कहा, "यह क्या करते हो बालक? दूध को पीते क्यों नहीं?" बच्चे ने कहा, "बादशाह, मैंने सुना है कि दूध में मक्खन होता है, परन्तु इस दूध में मक्खन तो दिखाई नहीं देता ?" बादशाह ने हँसकर कहा, "तुम अभी बच्चे हो। अरे, मक्खन इसके अन्दर अवश्य है, उसे देखना हो तो दूध को दही में डालकर जमाना पड़ता है, दही बन जाये तो उसमें मथनी डालकर मथना पड़ता है, बिलोना पड़ता है। जब बहुत ज़ोर से बिलोया जाता है, तब मक्खन ऊपर आता है।"

बच्चे ने कहा, "सुनो बादशाह ! तुम्हारे पहले दो सवालों का जवाब यही है। ईश्वर है सब जगह। इस संसार के कण–कण में रहता है वह, परन्तु दर्शन तब होते हैं जब मन को ओ३म् के जाप का दही डालकर जमाया जाता है, फिर धारणा, ध्यान और समाधि की मथनी से बिलोया जाता है तब भक्त अपने हृदय में भगवान् को अपने समक्ष देखता है, स्पष्ट रूप में देखता है। तब भगवान् के दर्शन होते हैं, निश्चित रूप में होते हैं।"

बादशाह ने कहा, "वाह रे बालक ! मेरे दो प्रश्नों का उत्तर दे दिया तुमने। मेरा सन्देह दूर हो गया। अब बताओ, यह ईश्वर क्या करता है?"

बच्चे ने कहा, "यह बात गुरु बनकर पूछते हो या शिष्य बनकर?"

बादशाह ने कहा, "गुरु बनकर कोई नहीं पूछता, मैं शिष्य बनकर पूछता हूँ।"

बच्चे ने कहा, "अद्‌भुत शिष्य हो तुम! गुरु नीचे पृथिवी पर खड़ा है और तुम ऊपर तख्त पर विराजमान हो!

बादशाह लज्जित होकर जल्दी से नीचे उतर आया। बच्चे को तख्त पर बैठा दिया। हाथ जोड़कर बोला, "अब बताओ, ईश्वर क्या करता है?"

बच्चे ने हँसकर कहा, "यही करता है, ऊपरवाले को नीचे और नीचेवाले को ऊपर।"

और यह खेल क्या हमने अपनी आँखों से नहीं देखा? मैंने बड़े–बड़े राजा और महाराजाओं को बम्बई की गलियों में खाक छानते हुए देखा है। उन लोगों को जो कुछ वर्ष पूर्व जेलों के बन्दी थे, ताज और तख्त सँभालते, शासन करते देखा है। उस भगवान् की महिमा महान् है। कौन उसका वर्णन कर सकता है! जब सब लोग छोड़ जाते हैं, जब सभी आशाएँ समाप्त हो जाती हैं, तब भी वह मनुष्य के साथ रहता है, तब भी इसकी रक्षा करता है।

पिछले वर्ष अल्मोड़ा के रास्ते से मैं कैलास गया। अल्मोड़ा से 250 मील के अन्तर पर है कैलास। पाँच सौ मील पैदल चला मैं। तब देखा कि सब जगह भगवान् सहायता करते हैं। दस साथी थे मेरी यात्रा में– 9 बंगाली साधु, एक मद्रासी। भारत की सीमा पर अन्तिम पड़ाव है गरबियांग। वहाँ से हमने गाइड लिया, रोटी पकाने के बर्तन लिये, खाने का सामान लिया, तम्बू लिये और अब चली यह पार्टी। तिब्बत की सीमा को पार करके पिस्सुलेक घाटी में पहुँच गई जो 16,500 फीट ऊँची है–बर्फ से लदी हुई। हर तरफ बर्फ ही बर्फ दिखाई देती है वहाँ। उस घाटी को लाँघकर हम आगे बढ़े। मानसरोवर पहुँच गये। मैं हूँ 'खुशहाल'। हर समय हँसता रहता हूँ, लोगों को हँसाता रहता हूँ, सबकी सेवा भी करता हूँ। मेरे इस स्वभाव और सेवाभाव को देखकर दस के दस साथी बोले, "आनन्द स्वामी, हम तो सर्वदा तेरे ही साथ रहेंगे।"

पन्द्रह हजार फीट की ऊँचाई पर है मानसरोवर। 54 मील इसका घेरा है। प्रकृति का सौन्दर्य वहाँ खेलता है, नाचता है। शीतल नीला जल वहाँ जैसे निमन्त्रण देता है–"आओ, मेरी गोद में आओ !

मैंने अपने बंगाली साथियों से कहा, "आओ इसमें स्नान करें।"

वे बोले, "नहीं आनन्द स्वामी, पहले तू नहा।"

मैंने उन्हें अपने गाँव की एक बात सुनाई। बताया कि पंजाब के देहात में हर ग्राम के निकट छोटा या बड़ा एक जोहड़ होता है जिसमें लोग नहाते हैं। एक दिन प्रातःकाल के समय सर्दी बहुत थी। तेज बरसाती हवा चल रही थी। एक पण्डित जी अपने घर से स्नान करने को चले। रास्ते में हवा से ठिठुर गए। जोहड़ पर पहुँचे यह देखने के लिए कि पानी कितना ठण्डा है, पाँव के अगले हिस्से को जिसे पंजाबी भाषा में ***'पब'*** कहते हैं, पानी में डाला। पानी था ठण्डा, बर्फ के समान। जल्दी से पाँव को बाहर निकालकर बोले, ***"पब स्नान सब स्नान"*** अर्थात् पाँव ने नहा लिया तो सारे शरीर ने नहा लिया। जूता पहनकर वापस आ गए। आ रहे थे तो आगे एक और पण्डित जी मिले। वे भी नहाने जा रहे थे। उन्होंने कहा, "क्यों भाई, नहा आये ?" पहले पण्डित ने कहा, ***"पब स्नान सब स्नान।"*** दूसरे पण्डित ने कहा, ***"तुझ स्नान तो मुझ स्नान।"*** अर्थात् तूने नहा लिया तो मैंने नहा लिया और यह कहकर वापस चल पड़ा। मैंने हँसते हुए कहा, "तुम भी क्या ऐसा ही स्नान करोगे ?"

और गौरीकुण्ड पहुँचे तो वहाँ और भी अधिक सर्दी थी। मैं हूँ सहनशील। 18,000 फीट ऊँचा गौरीकुण्ड। मैंने बर्फ के तोदों को इधर–उधर हटाया। एक कमण्डल भरकर शरीर पर डाला, सुन्न हो गया शरीर। दूसरा कमण्डल डालने का साहस नहीं हुआ। मेरे साथियों ने कहा– "तू दूसरा कमण्डल नहीं डालता, हम पहला भी नहीं डालेंगे।"

इस प्रकार हँस–हँसकर यात्रा करते रहे–ग्यारह साथी जो बिछड़ने का नाम नहीं लेते थे। परन्तु वापस आती बार, पिस्सुलेक घाटी में बर्फ से जो मैं फिसला तो दूर तक फिसलता चला गया। बर्फ के एक तोदे ने रोक लिया मुझे, नहीं तो आज करोलबाग न आना पड़ता, अफ्रीका के नगरों और जंगलों में भी न जाना पड़ता, वहीं शान्ति हो जाती सदा के लिए। बर्फ ने गिराया मुझे, बर्फ ने ही बचाया परन्तु उठने का प्रयत्न किया तो देखा एक पाँव टूट गया है। उठ भी नहीं सकता।

यत्न करके उठा। दिल ने कहा, 'चल आनन्द स्वामी, एक पाँव टूट गया तो क्या हुआ, दूसरा तो है। चल नहीं सकता तो बैठ जा।' गाइड को बुलाया, उससे कहा, "मुझसे चला नहीं जाता।" गाइड ने कहा, "आप यहीं बैठिये, मैं गरबियांग से झब्बू लेकर आता हूँ।" झब्बू बैल–जैसे उस जानवर को कहते हैं जिसपर बैठकर तिब्बत में यात्रा की जाती है।

घण्टों व्यतीत हो गये बर्फ में बैठे। तब झब्बू आया। उसपर बैठकर मैं गरबियांग पहुँचा। वहाँ पहुँचकर देखा–मेरे दस साथियों में से छः छोड़कर आगे चले गये हैं। आनन्द स्वामी मर गया है या जीवित है, यह देखने का भी यत्न नहीं किया उन्होंने। दूसरे दिन शेष चार साथी भी चले गए। एक घायल फ़कीर के लिए वे रुक नहीं सकते थे। कहते थे, सदा तेरे साथ रहेंगे। एक दिन भी साथ नहीं रह सके। **क्रमशः**

☞ पृष्ठ 08 का शेष

हिन्दू राज्य ही क्यों ?

संक्षेप में हम कहना चाहें, तो यह कह सकते हैं कि महात्मा गांधी जिसे रामराज्य कहते थे, उसे ही हम हिन्दू राज्य कहते हैं–

दैहिक दैविक भौतिक तापा।
राम राज काहू नहिं व्यापा।।

यह राम–राज्य का आदर्श था, तो हिन्दू–राज्य का भी आदर्श यही है। पर रामराज्य को यदि कोई 'यूटोपिया' कहने पर आमादा हो, तो हम कहेंगे कि गांधी ने जिस नए भारत के निर्माण के संकल्प की बात कही है, हमारे हिन्दू राज्य का आदर्श भी वही है।

और भी आधुनिक मानस वालों के लिए कहेंगे कि हम जिसे हिन्दू राज्य कह रहे हैं उसका आदर्श विश्वकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर के ***'चित्त जेथा भयशून्य'*** शीर्षक गीत में उभरकर सामने आया है। उस गीत का अनुवाद (श्री सुधीन्द्र द्वारा बंगला से अनूदित) इस प्रकार है–

स्वतन्त्रता–स्वर्ग में पिता हे,
जगे जगे देश यह हमारा !
अशंक मन हो, उठा हुआ शिर,
स्वतन्त्र हो पूर्ण ज्ञान जिसमें
जहाँ घरों की न भित्तियाँ ये करें
जगत् खण्ड खण्ड न्यारा!
सदैव ही सत्य के तले से
जहाँ पिता, शब्द–शब्द निकले
छुए बढ़ा हाथ पूर्णता को जहाँ
परिश्रम अथक हमारा !
छिपे भटक कर सुबुद्धि–धारा
न रूढ़ियों के दुरन्त मरु में
विशाल विस्तृत विचार–कृति में
लगे जहाँ चित्त, पा सहारा।
स्वतन्त्रता–स्वर्ग में पिता हे,
जगे जगे देश यह हमारा।।

हमें हिन्दू शब्द को साम्प्रदायिकता, संकीर्णता तथा दकियानूसीपन की लांछना से निकालकर गौरव के उच्च सिंहासन पर बिठाना होगा। जब सुदूरस्थ कोनों में भी वस्तुस्थिति की परिचायक यह हिन्दी, हिन्दू, हिन्दुस्तान के त्रित की ध्वनि हमें कहीं सुनाई नहीं दी, तो हमने जनता के सामने इस विचारधारा को नारेबाजी के स्तर से निकालकर बौद्धिक स्तर पर रखने का विनम्र प्रयास किया है। जिनके हाथ में शासन की बागडोर है और जिनके मन में देश के कोटि–कोटि जन–समुदाय के कल्याण की कामना है, वे यदि हिन्दू राज्य की स्थापना की दिशा में रंचमात्र भी सक्रिय हो सकें, तो इस लघु प्रयास की सार्थकता है।

{आर्यजगत् का हिन्दू रक्षा विशेषांक, 18 अक्तूबर 1981 का सम्पादकीय}

'पं. क्षितीश वेदालंकार ग्रन्थावली भाग–3' से साभार

पत्र/कविता

कर्मयोगी

स्वार्थ भावना से ऊपर उठकर सेवा निष्काम करें।
धर्म की मर्यादा में रह कर धर्म का ऊँचा नाम करें।
समय है थोड़ा काम अधिक है कैसे हम आराम करें।
जीवन की हो सफल कमाई ऐसा उत्तम काम करें।।

जन्म बड़ा अनमोल मिला है बिक न जाए कोड़ी दाम।
जन्म–जन्म की नेक कमाई कहीं न हो जाए नीलाम।
कर्मों से रावण बन जाते कर्मों से बन जाते राम।
खोटे–खरे कर्मों पर निर्भर रहता है जीवन संग्राम।।

जैसी करनी वैसी भरनी यही तो है जीवन का सार।
कर्मों का फल कड़वा–मीठा चखता है सारा संसार।
अन्तः करण से दृढ़ निश्चय की जब भी गूंजी है ललकार।
साहस साथ निभाता जाता, हो जाता है बेड़ा पार।।

इतने बड़े संसार में जिसको ढंग से चलना आता है।
कितनी भी बाधाएँ आएँ फिर भी नहीं घबराता है।
प्रभुकृपा से पग–पग पर फूलों की तरह मुस्काता है।
मन की उमंगों के साजों पर गीत सुहाने गाता है।।

श्री वेद प्रकाश शर्मा जी द्वारा रचित
'जीवन दर्पण' पुस्तक से साभार

संन्यास आश्रम की आवश्यकता

प्रश्न – अध्यापन और उपदेश गृहस्थ किया करते हैं, पुनः संन्यासी का क्या प्रयोजन ?

उत्तर – सत्योपदेश सब आश्रमी करें और सुनें परन्तु जितना अवकाश और निष्पक्षपातता संन्यासी को होती है उतनी गृहस्थों को नहीं। हाँ ! जो ब्राह्मण हैं उनका यही काम है कि पुरुष पुरुषों को और स्त्री स्त्रियों को सत्योपदेश और पढ़ाया करें। जितना भ्रमण का अवकाश संन्यासी को मिलता है उतना गृहस्थ ब्राह्मणादिकों को कभी नहीं मिल सकता। जब ब्राह्मण वेदविरुद्ध आचरण करें तब उनका नियन्ता संन्यासी होता है। इसलिये संन्यास का होना उचित है।

प्रश्न – जो ब्रह्मचर्य से संन्यास लेवेगा, उसका निर्वाह कठिनता से होगा और काम का रोकना भी अति कठिन है, इसलिए गृहाश्रमी और वानप्रस्थ होकर जब वृद्ध हो जाय, तभी संन्यास लेना अच्छा है।

उत्तर – जो निर्वाह न कर सके, इन्द्रियों को न रोक सके, वह ब्रह्मचर्य से संन्यास न लेवे, परन्तु जो रोक सके वह क्यों न लेवे ? जिस पुरुष ने विषय के दोष और वीर्य संरक्षण के गुण जाने हैं, वह कभी विषयासक्त नहीं होता और उसका वीर्य विचाराग्नि का इन्धनवत् है अर्थात् उसी में व्यय हो जाता है। जैसे वैद्य और औषधों की आवश्यकता रोगी के लिये है, नीरोगी के लिये नहीं, वैसे जिस पुरुष वा स्त्री को विद्या, धर्म–वृद्धि और सब संसार का उपकार करना ही प्रयोजन हो, वह विवाह न करे, जैसे पञ्चशिखादि पुरुष और गार्गी आदि स्त्रियाँ हुई थीं। इसलिये संन्यासी होना अधिकारियों के लिए उचित है और जो अनधिकारी संन्यास ग्रहण करेगा तो आप डूबेगा, औरों को भी डुबावेगा। जैसे 'सम्राट्' सर्वोपरि चक्रवर्ती राजा होता है, वैसे 'परिव्राट्' संन्यासी होता है। प्रत्युत राजा अपने देश में वा सम्बन्धियों में सत्कार पाता है, और संन्यासी सर्वत्र पूजित होता है।

विद्वत्त्वं च नृपत्त्वं च नैव तुल्यं कदाचन।
स्वदेशे पूज्यते राजा विद्वान् सर्वत्र पूज्यते।।
चाणक्य नीतिशतक 3

विद्वान् और राजा भी कभी तुल्य नहीं होते, क्योंकि राजा अपने ही देश में मान पाता है और विद्वान् सर्वत्र प्रतिष्ठा पाता है।

इसलिये विद्या पढ़ने, सुशिक्षा लेने और बलवान् होने आदि के लिये ब्रह्मचर्य, सब प्रकार के उत्तम व्यवहार सिद्ध करने के अर्थ गृहस्थ, विचार, ध्यान और ज्ञान बढ़ाने और तपश्चर्या करने के लिये वानप्रस्थ, और वेदादि सत्यशास्त्रों का प्रचार, धर्म–व्यवहार का ग्रहण और दुष्ट व्यवहार का त्याग, सत्योपदेश और सबको निःसन्देह करने आदि के लिये संन्यासाश्रम है। परन्तु जो इस संन्यास के मुख्य–धर्म सत्योपदेशादि नहीं करते, वे पतित और नरकगामी हैं। इससे संन्यासियों को उचित है कि सदा सत्योपदेश, शङ्का–समाधान, वेदादि–सत्यशास्त्रों का अध्यापन और वेदोक्त धर्म की वृद्धि प्रयत्न से करके सब संसार की उन्नति किया करें।... संन्यासियों का मुख्य कर्म यही है कि सब गृहस्थादि आश्रमों को सब प्रकार के व्यवहारों का सत्य निश्चय करा, अधर्म व्यवहारों से छुड़ा, सब संशयों का छेदन कर, सत्यधर्मयुक्त व्यवहारों में प्रवृत्त कराया करें।

प्रश्न – संन्यासी लोग कहते हैं कि हमको कुछ कर्त्तव्य नहीं। अन्न–वस्त्र लेकर आनन्द में रहना, अविद्यारूप संसार से माथापच्ची क्यों करनी ? अपने को ब्रह्म मानकर सन्तुष्ट रहना, कोई आकर पूछे तो उसको भी वैसा ही उपदेश करना कि "तू भी ब्रह्म है, तुझको पाप–पुण्य नहीं लगता, क्योंकि शीतोष्ण शरीर के, क्षुधा तृषा प्राण के, और सुख–दुःख मन के धर्म हैं, जगत् मिथ्या है और जगत् के व्यवहार भी सब कल्पित अर्थात् झूठे हैं, इसलिये इनमें फसना बुद्धिमानों का काम नहीं, जो कुछ पाप–पुण्य होता है, वह देह और इन्द्रियों का धर्म है, आत्मा का नहीं", इत्यादि उपदेश करते हैं। और आपने और ही संन्यास का धर्म कहा। अब हम किसको सच्चा मानें ?

उत्तर – क्या उनको अच्छे कर्म भी कर्त्तव्य नहीं ? देखो ! **'वैदिकैश्चैव कर्मभिः'।** (मनुस्मृति 6.75) मनु जी ने वैदिक कर्म जो कि धर्मयुक्त सत्यकर्म हैं, वे संन्यासियों के लिए भी अवश्य करना लिखे हैं। क्या वे भोजन–छादनादि कर्म छोड़ सकेंगे ? जब ये कर्म नहीं छूटते तो उत्तम कर्म छोड़ने से वे पतित नहीं होंगे ? जब गृहस्थों से अन्न–वस्त्रादि लेते हैं और उनका उपकार नहीं करते तो क्या वे महापापी नहीं होंगे ? जैसे आंख से देखना, कान से सुनना न हो, तो आँख और कान का होना व्यर्थ है, वैसे ही जो संन्यासी सत्योपदेश और वेदादि–सत्यशास्त्रों का विचार–प्रचार नहीं करते, तो वे भी जगत् में व्यर्थ और भाररूप हैं।

और जो 'अविद्यारूप संसार से माथापच्ची क्यों करनी' आदि लिखते और कहते हैं, वैसे उपदेश करनेवाले ही मिथ्यारूप, पापी और शरीरादि से कर्म किये जाते हैं, वे सब पाप के बढ़ानेवाले हैं। जो कुछ आत्मा के ही हैं और उनका फल भोगनेवाला भी आत्मा ही है। जो जीव को ब्रह्म बतलाते हैं, वे अविद्या–निद्रा में सोते हैं। क्योंकि जीव अल्प, अल्पज्ञ है, और ब्रह्म सर्वव्यापक, सर्वज्ञ है। ब्रह्म नित्य–शुद्ध–बुद्ध–मुक्त–स्वभावयुक्त है, और जीव कभी बद्ध, कभी मुक्त रहता है। ब्रह्म को सर्वव्यापक, सर्वज्ञ होने से भ्रम वा अविद्या कभी नहीं होती, और जीव को कभी विद्या और कभी अविद्या होती है। ब्रह्म जन्म–मरण, दुःख को कभी नहीं प्राप्त होता और जीव प्राप्त होता है। इसलिये उनका वह उपदेश मिथ्या है।

साधु–वैरागी–गोसांई–खाखी

प्रश्न – जो संन्यासी से अन्य साधु, वैरागी, गोसांई, खाखी आदि हैं, वे भी संन्यासाश्रम में गिने जायेंगे, वा नहीं ?

उत्तर – नहीं; क्योंकि उनमें संन्यास का एक भी लक्षण नहीं। वे वेदविरुद्ध मार्ग में प्रवृत्त होकर वेद से अधिक अपने सम्प्रदाय के आचार्यों के वचन मानते हैं, अपने ही मत की प्रशंसा करते हैं और मिथ्या–प्रपंच में फसकर अपने स्वार्थ के लिये दूसरों को अपने–अपने मत में फसाते हैं। सुधार करना तो दूर रहा, उसके बदले संसार को बहकाकर अधोगति को प्राप्त कराते हैं और अपना प्रयोजन साधते हैं, इसलिये इनको संन्यासाश्रम में नहीं गिन सकते, किन्तु यह स्वार्थाश्रमी तो पक्के हैं, इसमें कुछ सन्देह नहीं।

संन्यासी आप धर्म में चलें और सब संसार को चलाते रहें, जिससे आप और सब संसार इस लोक अर्थात् इस जन्म में और परलोक अर्थात् परजन्म में स्वर्ग अर्थात् सुख का भोग किया करें।

भावेश मेरजा
'सत्यार्थ–प्रकाशक' से साभार
****

डीएवी सेक्टर 39-डी, चंडीगढ़ में 12वाँ अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस

'एक पृथ्वी, एक स्वास्थ्य के लिए योग' की थीम के अंतर्गत 12वें अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस के अवसर पर डीएवी पब्लिक स्कूल, सेक्टर 39–डी, चंडीगढ़ में योग सत्र का आयोजन किया गया।

कार्यक्रम का शुभारंभ प्रातःकालीन वातावरण में सकारात्मक ऊर्जा एवं उत्साह के साथ हुआ। सभी प्रतिभागियों ने सामूहिक रूप से योगाभ्यास करते हुए स्वस्थ एवं तनावमुक्त जीवन जीने का संकल्प लिया।

इस कार्यक्रम में प्रसिद्ध योगाचार्या एवं वेलनेस प्रैक्टिशनर शिवाली अरोड़ा ने मुख्य प्रशिक्षक के रूप में योग सत्र का संचालन किया। उन्होंने प्रतिभागियों को विभिन्न योगासन, प्राणायाम, ध्यान एवं श्वास संबंधी अभ्यासों का प्रशिक्षण दिया और कहा नियमित योगाभ्यास न केवल शारीरिक स्वास्थ्य को सुदृढ़ बनाता है, बल्कि मानसिक शांति, एकाग्रता, आत्मविश्वास एवं सकारात्मक सोच को भी विकसित करता है।

प्रधानाचार्या श्रीमती मनिंदर वोहरा ने कहा कि योग भारत की प्राचीन एवं गौरवशाली सांस्कृतिक विरासत है, जिसे आज पूरा विश्व अपनाकर लाभान्वित हो रहा है। योग केवल एक व्यायाम नहीं, बल्कि एक संपूर्ण जीवन पद्धति है।

सभी प्रतिभागियों ने योग के माध्यम से स्वास्थ्य, संतुलन एवं सकारात्मक जीवन मूल्यों को अपनाने का संदेश दिया।

आयोजन में विद्यालय के समस्त शिक्षकों एवं स्टाफ सदस्यों का विशेष सहयोग रहा।

कार्यक्रम के अंत में विद्यालय परिवार द्वारा श्री शिवाली अरोड़ा का उनके प्रेरणादायी एवं ज्ञानवर्धक योग सत्र के लिए हार्दिक धन्यवाद एवं आभार व्यक्त किया गया।

आर्य वीर दल पाली ने लगाया आत्मरक्षा एवं चरित्र निर्माण शिविर

आर्य समाज एवं आर्य वीर दल, पाली के संयुक्त तत्वावधान में 17 दिवसीय आत्मरक्षा एवं चरित्र निर्माण प्रशिक्षण के माध्यम से राष्ट्र निर्माण का सशक्त कार्य कर रहा है। ज्ञानचंद पारख ने आर्य वीर दल को सनातन वैदिक धर्म का सशक्त ध्वजवाहक बताया। शिवदत्त

शिविर का समापन समारोह महर्षि दयानन्द सरस्वती व्यायामशाला में सम्पन्न हुआ।

कार्यक्रम के मुख्य अतिथि विधायक भीमराज भाटी सहित पूर्व विधायक ज्ञानचंद पारख, समाजसेवी सुनील भंडारी, नरेंद्र माच्छर, महेंद्र कवाड, पुनीत मुधा एवं मगराज जैन सहित अनेक गणमान्य अतिथि उपस्थित रहे। कार्यक्रम की अध्यक्षता राजस्थान आर्य वीर दल के अधिष्ठाता विनोद आर्य (जालोर) ने की।

श्री भीमराज भाटी ने विशेष रूप से आर्य वीरांगनाओं के साहस, आत्मविश्वास और अनुशासन की सराहना की। श्री सुनील भंडारी ने कहा कि आर्य वीर दल शौर्य, अनुशासन और संस्कारों का अद्वितीय संगम है, जो व्यक्ति निर्माण आर्य ने कहा कि ऐसे प्रशिक्षण शिविर युवाओं को सशक्त बनाते हैं।

शिविर में 121 शिविरार्थियों ने अद्भुत शौर्य प्रदर्शन प्रस्तुत किया। इसमें सूर्य नमस्कार, चंद्र नमस्कार, भूमि नमस्कार, कराटे, लाठी, भाला एवं तलवार संचालन, लेजियम नृत्य, योगासन, तथा खड़ताल नृत्य जैसी विधाओं का प्रभावशाली प्रदर्शन किया गया, जिसे देखकर उपस्थित जनसमूह अभिभूत हो उठा।

आर्य समाज पाली के अध्यक्ष दिलीप परिहार ने सभी अतिथियों, प्रशिक्षकों, अभिभावकों एवं सहयोगी संस्थाओं का आभार व्यक्त किया। उन्होंने कहा कि ऐसे शिविर युवा पीढ़ी में चरित्र निर्माण, अनुशासन और राष्ट्रभक्ति की भावना को मजबूत करते हैं।

डी.ए.वी. चौपाल के प्रांगण में वैदिक हवन का आयोजन

डी.ए.वी. चौपाल के प्रांगण में वैदिक हवन व प्रार्थना सभा का आयोजन किया गया। इस हवन की मुख्य यजमान विद्यालय की प्रधानाचार्या श्रीमती अनिता डोगरा जी रहीं। अभिभावक शिक्षक संघ के प्रतिनिधि सदस्य श्री सुरेश शर्मा, श्री सुनील ठाकुर, श्री

मनोज मेहता, श्री रितेश मैहता, श्री विनोद–चंदेल, श्रीमती रंजना भागटा व श्रीमती उपासना जिन्हा जी ने भी अपनी अमूल्य सहभागिता निभाई।

पर्यावरण शुद्धि व विश्व कल्याण की कामना के साथ वेदमंत्रों के उच्चारण के साथ आहुतियाँ दी गई। इस हवन का मुख्य उद्देश्य समाज में सकारात्मक ऊर्जा का संचार करना, आपसी भातृत्व को बढ़ाना और वैदिक संस्कृति को जन–जन तक पहुँचाना था।

इस सुअवसर पर आर्य युवा समाज का भी गठन किया गया। जिसकी प्रधान श्रीमती अनिता डोगरा जी (प्रधानाचार्या), उप–प्रधान श्रीमती मीना नेगी, कोषाध्यक्ष श्री कपिल भण्डारी, सचिव श्री प्रदीप कुमार, सह–सचिव श्री मिन्टू कुमार, पंचार–प्रसार प्रभारी श्रीमती मीना नेगी एवं अन्य सभासदों को मनोनीत किया गया।

विद्यालय की प्रधानाचार्या श्रीमती अनिता डोगरा जी ने इस वैदिक हवन में उपस्थित अभिभावक–शिक्षक परिषद् शिक्षकों व छात्रवृंद का आभार व्यक्त किया।

शान्ति पाठ से आयोजन का समापन हुआ।

Registration No. R.N.I. 39\57
Delhi Postal R. No. D.L. (ND)-11\6066\2024-25-26
अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लाइसैंस नं. U(C)-103\2024-25-26
Posted at L.P.C.(Delhi RMS)D110006 ON Wednesday & Thursday, 2026

डी.ए.वी. न्यू पनवेल में अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस का आयोजन

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल न्यू पनवेल में अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस बड़े उत्साह एवं उमंग के साथ मनाया गया। इसमें विद्यार्थियों व शिक्षकों ने बढ़–चढ़कर भाग लिया।

कार्यक्रम का आरंभ विद्यालय के प्राचार्य श्रीमान सुमंत घोष व उनके सहयोगी पर्यवेक्षी प्रमुखों द्वारा दीपप्रज्वलन व गायत्री मंत्र के साथ हुआ। तत्पश्चात् डी.ए.वी. गान प्रस्तुत किया गया। कार्यक्रम को आगे बढ़ाते हुए प्रभावशाली ढंग से लयबद्ध योग क्रियाएँ प्रस्तुत की गईं।

छात्रों द्वारा सूर्य मंत्र उच्चारित करते हुए सूर्य नमस्कार मुद्रा का प्रभावशाली प्रस्तुतीकरण किया गया। दीर्घायु जीवन के लिए नियमित योगाभ्यास के महत्व व उसके स्वास्थ लाभों के बारे में विस्तार से बताया गया। विद्यार्थियों ने पूरे उत्साह के साथ विभिन्न मुद्राओं में किए जाने वाले आसनों का अभ्यास किया।

शिक्षकों व विद्यार्थियों सहित उपस्थित सभी जनों ने अपने दैनिक जीवन में योग को अपनाने व नियमित अभ्यास करने का संकल्प लिया। प्राचार्य महोदय ने सभी के मानसिक व शारीरिक स्वास्थ्य व दीर्घायु जीवन के लिए नियमित योग के महत्व पर प्रकाश डाला।

कार्यक्रम का समापन विद्यार्थियों द्वारा प्रस्तुत प्रार्थना के साथ किया गया। विद्यालय द्वारा अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस पर आयोजित यह कार्यक्रम अत्यंत सफल व सराहनीय रहा।

स्त्री आर्य समाज सेक्टर-16 डी, चण्डीगढ़ में पौर्णमासीय यज्ञ

स्त्री आर्य समाज सेक्टर–16 डी, चण्डीगढ़ में ज्येष्ठ पूर्णिमा के पावन अवसर पर सायं 5:00 बजे से 6:00 बजे तक मासिक पौर्णमासीय यज्ञ का श्रद्धापूर्वक आयोजन सम्पन्न हुआ। कार्यक्रम में उपस्थित मातृशक्ति एवं आर्यजनों ने वेद–मन्त्रों के उच्चारण के साथ यज्ञ में आहुतियाँ अर्पित कर विश्वकल्याण, राष्ट्र की उन्नति तथा समस्त प्राणिमात्र के सुख–समृद्धि की मंगलकामना की। इस अवसर पर मुख्य यजमान के रूप में श्रीमती अनुपमा वरमानी एवं श्रीमती शशि शर्मा ने यज्ञ में सहभागिता कर वैदिक परम्परा के संरक्षण एवं संवर्धन का संदेश दिया।

प्रधाना श्रीमती अनुजा शर्मा ने बताया कि यह पौर्णमासीय यज्ञ निरन्तर प्रत्येक पूर्णिमा को नियमित रूप से आयोजित किया जा रहा है। उनके नेतृत्व में महिलाओं की सक्रिय सहभागिता के साथ वैदिक यज्ञ, सत्संग एवं संस्कारमूलक गतिविधियों का सफल संचालन हो रहा है, जिससे समाज में वैदिक संस्कृति के प्रति जागरूकता एवं धार्मिक चेतना का निरन्तर प्रसार हो रहा है।

कार्यक्रम के अंत में उपस्थित सभी श्रद्धालुओं को आगामी पौर्णमासीय यज्ञ में भी अधिकाधिक संख्या में सम्मिलित होकर यज्ञीय परम्परा को सशक्त बनाने तथा **'यज्ञो वै श्रेष्ठतमं कर्म'** के वैदिक संदेश को जन–जन तक पहुँचाने का आह्वान किया गया।

डी.एल.डी.ए.वी. शालीमार बाग, दिल्ली में स्वागत यज्ञ

ग्रीष्मावकाश के उपरांत शिक्षा कार्य के पुनः प्रारंभ होने और नवयुक्त प्रधानाचार्या श्रीमती निशा शर्मा जी के स्वागत एवं अभिनन्दनार्थ विद्यालय में 2 जुलाई को विशेष यज्ञ का आयोजन किया गया। प्रधानाचार्या के सानिध्य में कक्षा ग्यारहवीं और बारहवीं के विद्यार्थियों ने श्रद्धा, समर्पण के साथ दिव्य वैदिक मंत्रोच्चारण करते हुए सभी के कल्याणार्थ आहुति प्रदान की।

प्रधानाचार्या श्रीमती निशा शर्मा ने अपने संबोधन में डी.ए.वी. की महान परंपरा का वर्णन करते हुए कहा कि हमारी परंपरा में प्रार्थना का सर्वश्रेष्ठ रूप यज्ञ ही है, जो वातावरण और चित्त के स्तर पर भी परिमार्जन करता है, शुद्ध करता है। हम सभी सौभाग्यशाली हैं, जो इस वैदिक कार्य का हिस्सा बन रहे हैं।

प्रधानाचार्या जी ने कहा कि शिक्षा का महत्वपूर्ण आधार अनुशासन ही होता है, और अनुशासन ही शिक्षण कार्य को उद्देश्यता से परिपूर्ण कर देता है।

प्राचार्या निशा शर्मा ने इस विद्यालय के प्राचार्या पद का दायित्व सौपने हेतु डी.ए.वी. प्रबन्धन के प्रधान, स्कूल चैयरमैन, निदेशक तथा प्रबन्धक का आभार व्यक्त किया। उन्होंने विद्यालय के शिक्षक एवं गैर शिक्षक वर्ग को विद्यालय के लिए निष्ठा, अनुशासन तथा समर्पण से कार्य करने का आह्वान किया।

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा मंदिर मार्ग के लिए **एस.के शर्मा** द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित **फर्स्ट इम्प्रैशन कार्पोरेट सर्विसिज, (प्रा.) लि.,** ई.113–114, सैक्टर–63, नोएडा, उ.प्र.–201301 (दूरभाष : 120–4246315) से मुद्रित एवं कार्यालय **'आर्य जगत्'** आर्यसमाज भवन मंदिर मार्ग नई दिल्ली से प्रकाशित मो.–9868894601, 23362110, 23360059 सम्पादक – **पूनम सूरी**